तीसरा परिच्छेद

किसी भी साहित्यकार की कृतियों का मूल्यांकन करने के लिए यह देखना आवश्यक होता है कि कृति निर्माण की स्थितियाँ (Land-Marks) कौन-सी हैं ? किन स्थितियों को पार करते हुए इस स्थिति तक साहित्यकार पहुंचा है ? स्थितियों की सच्ची पहचान की जाने पर रचयिता की विकासोन्मुखता तथा परिपक्वता का बोध होता है । मूल्यांकन करने का एक दूसरा विधान भी है जिस में कृतियों की वस्तु-विविधता को वर्गों में विभाजित कर एक एक वर्ग की विशेषताओं की गणना की जाती है । हम इस अध्याय में इन दोनों विधानों का उपयोग कर एकांकीकार डा. रामकुमार वर्मा की कृतियों का मूल्यांकन करेंगे ।

डा. वर्मा का रचना काल सन् १९३० से प्रारंभ हुआ है और आज तक उस की गतिशीलता वैसे ही बनी रही । इन ३३ वर्षों में जिन एकांकियों का प्रणयन वर्मा जी ने किया है उन का क्रमिक विकास स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है । एकांकियों का क्रमगत अध्ययन करने से यह विदित होता है कि उन की एकांकी कला प्रौढ़ से प्रौढ़तर, प्रौढ़तर से प्रौढ़तम स्थिति तक पहुंची है । इस क्रमिक विकास को दो भागों में विभाजित कर सकते हैं ।

१. निर्माण काल. २. विस्तार काल.

प्रथम तेरह वर्ष अर्थात् सन् १९३० से लेकर सन. १९४३ तक उन के एकांकियों का निर्माण काल है । द्वितीय २० वर्ष अर्थात् सन् १९४३ से १९६३ तक उन का विस्तार काल है ।

निर्माण कालीन एकांकियों के विकास की स्थितियां दृष्टिगोचर होती हैं एक एक स्थिति को पार कर सन् १९४३ तक आते आते विस्तार की स्थिति तक पहुंच गये हैं । निर्माण कालीन विकास की ४ स्थितियां हैं जिन्हें रचना तिथि क्रम के आधार पर निम्नांकित कर देख सकते हैं ।

पहली स्थिति ---- भावनाओं का द्वन्द्व
दूसरी स्थिति ---- घटनाओं का मनोरंजन
तीसरी स्थिति ---- जीवन की विविध परिस्थितियों का आकलन.
चौथी स्थिति ---- मनोविज्ञान की गहराइयों में प्रवेश.

सन् १९३० से सन् १९४३ तक उन के ३ एकांकी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। १. पृथ्वीराज की आंखें २. रेशमी टाई ३. चारुमित्रा। इन संग्रहों में कुल मिलाकर १५ एकांकी हैं। निर्माण कालीन चार स्थितियों के दर्शन इन एकांकियों में होते हैं।

भावनाओं का द्वन्द्व " बादल की मृत्यु, " " पृथ्वीराज की आंखें, " " दस मिनट, " " चंपक, " " एक्ट्रेस " में देखा जाता है। दूसरी स्थिति, घटनाओं का मनोरंजन नहीं का रहस्य, " परीक्षा " में दिखाई पड़ती है। तीसरी स्थिति, जीवन की विविध परिस्थितियों, का आकलन, " रेशमी टाई " " एक तोले, अफीम की कीमत, " " १२ जुलाई की शाम " " रूप की बीमारी " में मिलती है। " चारुमित्रा " चौथी स्थिति, मनोविज्ञान की गहराइयों में प्रवेश, की द्योतक है। इस संग्रह में संग्रहीत चारों एकांकी यथा, " चारुमित्रा, " " उत्सर्ग " " रजनी की रात, और ७ " अन्धकार " मनोवैज्ञानिक अध्ययन को प्रस्तुत करते हैं।

अब हम एक एक स्थिति का विश्लेषण कर उन कृतियों की विशेषताओं का उल्लेख करेंगे जिन में क्रमगत निर्माण कालीन स्फुट रेखाएं अंकित हुई हैं।

भावनाओं का द्वन्द्व :-- दूसरे परिच्छेद में एकांकी शिल्प पर विचार करते हुए हम ने यह स्पष्ट किया है कि " भावनाओं का द्वन्द्व " एकांकी शिल्प का मेरुदण्ड है। नाटक में आन्तरिक और बाह्य द्वन्द्व के आधार पर ही कथा वस्तु का कुतूहल से युक्त विकास इच्छित परिणाम अथवा चरमसीमा तक होता है। बाह्य द्वन्द्व की अपेक्षा आन्तरिक द्वन्द्व अधिक महत्त्वपूर्ण है। इब्सन ने तो मानव चरित्र की उत्कृष्ट कल्पना ही नाटक की सब से उत्तम कृति मानी है और मानव चरित्र की कल्पना बिना आन्तरिक संघर्ष या द्वन्द्व के हो नहीं सकती। (१) एकांकी प्रणयन के प्रारंभ कालीन एकांकियों में प्रमुख रूप से भावनाओं के द्वन्द्व पर ही विशेष बल दिया गया है। यह सत्य है कि किसी भी साहित्यकार अपनी रचना के आरंभ काल में उस विधा के प्रमुख तत्व पर ही अधिक ध्यान देता है जिस से उस का कृतित्व सफल हो जाता है। डा. रामकुमार वर्मा में भी यह प्रवृत्ति दर्शन देती है। उन की आरंभ कालीन या निर्माणकालीन प्रथम

---

(१) डा. रामकुमार वर्मा -- पृथ्वीराज की आंखें -- पृ. ८.

स्थिति की कृतियों में " भावनाओं के द्वन्द्व " का रूप स्पष्ट लक्षित होता है। " पृथ्वीराज की आंखें " संग्रह के पूर्वरंग में उन्होंने स्वयं लिखा है कि " इन नाटकों में आन्तरिक संघर्ष की प्रधानता रखने की चेष्टा की गई है। " चंपक " में किशोर का अन्तर्द्वन्द्व, " नहीं का रहस्य " में प्रो. हरिनारायण का मानसिक चित्र, " पृथ्वीराज की आंखें " में पृथ्वीराज चौहान का सुदृढ़ चरित्र सौन्दर्य, " बादल की मृत्यु " में बादल का मनोवेग आदि आन्तरिक संघर्ष के चित्र हैं। बाह्य संघर्ष का विनोद मुझे विशेष रुचिकर नहीं। "

उन का प्रथम एकांकी " बादल की मृत्यु " सन् १९३० में प्रकाशित हुआ है। प्रयोग की दृष्टि से एकांकी साहित्य के इतिहास में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। इस में केवल कल्पना है। भावनाओं के द्वन्द्व का चित्रीकरण है। यह न तो अभिनयात्मक है न यह सफल एकांकी। इसी कारण से कुछ आलोचकों ने इस को अभिनयात्मक गद्य काव्य (२) कहा है। नाटकों के प्रति डा. वर्मा के झुकाव का कारण यह है कि उन की रुचि अभिनयात्मक काव्य (Dramatic poetry) लिखने में थी। " नूरजहां " के काव्य निर्माण से भी जब उन का मन नहीं भरा तो उन्होंने एकांकी विधा को ग्रहण किया है। एकांकी - रचना से उन्हें वह मानसिक संतुष्टि प्राप्त हुई जो अभिनयात्मक काव्य-सृजना से होती है। " बादल की मृत्यु " के रचनाकाल में डा. वर्मा की काव्य प्रतिभा कथा का आधार लेकर वर्णनात्मकता की ओर उन्मुख हो रही थी। सन् १९३० से सन् १९३६ तक की कृतियों में उन का कवि आत्मभिव्यक्ति करने को प्रस्तुत है। " कवि रामकुमार वर्मा ने निशीथ (१९३१) से रूपराशि होते हुए चित्ररेखा (१९३५) तथा चन्द्रकिरण (१९३७) तक की लीक पर चलकर यात्रा की है। उन के स्फुट रेखा-चित्र (गद्य - पद्य दोनों में) और एकांकी साफ़ बता रहे हैं कि कवि में मुक्त उड़ान अब नहीं रही। अब तो वह गांव खोलना चाहता है। (२) " बादल की मृत्यु " एकांकी पर इसी मत: स्थिति का प्रभाव दृष्टव्य है। प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त का कथन है कि " इस में काव्य का अंश अभिनय तत्व की अपेक्षा अधिक है। कुछ आलोचकों का विचार है कि " बादल की मृत्यु " नाटक के रूप में कविता ही है। Harold Brighouse के How the weather is made के सदृश यह open air play है। Fantacy है।

---

(१) प्रकाशचन्द्र गुप्त हंस एकांकी नाटक अंक पृ. ७२५.

(२) डा. नगेन्द्र आधुनिक हिन्दी नाटक पृ. १३३.

स्वयं डा. वर्मा ने इस एकांकी पर अपना विचार इस प्रकार प्रकट किया है " यह एक रूपक है मैटरलिंक की शैली पर । यह अभिनय के लिए नहीं है । यह तो जीवन के स्वार्थ की भांकी है । उस में केवल कल्पना है। उस के चित्रण में नाटककार और कवित्व में समझौता हुआ है । " (१)

" बादल की मृत्यु " पर आलोचकों के उपर्युक्त मतों का उल्लेख इसलिए किया गया कि डा . वर्मा का प्रथम एकांकी किस तरह काफी चर्चनीयांश हो गया है । प्रकृति के रंगमंच पर प्रकृति के ही गूढ़ तत्वों को समझाने का प्रयत्न इस में किया गया है । भावनाओं के द्वन्द्व का चित्रीकरण हुआ है । इस में पात्र मनुष्य नहीं, बादल सन्ध्या और वायु है । प्रकृति की नित्य परिवर्तन शीलता में यही संदेश छिपा हुआ है कि जीवन में भी स्थिरता की नहीं, गतिशीलता की प्रधानता है । मोह के उत्पन्न होने पर स्थिरता की आकांक्षा जागृत होती है । पर प्रकृति की अप्रतिम शक्ति उस मोह को चकनाचूर करती है । स्वार्थी बादल सन्ध्या को रोक रखना चाहता है । जीवन के रंगमंच पर एक एक पात्र का प्रवेश तथा प्रस्थान होता रहता है । अस्थिरता ही जीवन का सौन्दर्य है । सन्ध्या बादल के अनुरोध का विरोध तो करती है । पर मोह के कारण उस में भी उदास उदासी उत्पन्न होती है । हवा के द्वारा यह मोह नष्ट हो जाता है । स्थिरता तथा अस्थिरता, मोह तथा विराग, प्रेम, कर्तव्य-स्वार्थ आदि द्वन्द्व भावनाओं का चित्रण बादल, सन्ध्या और हवा के द्वारा कवित्वपूर्ण ढंग से किया गया है । इस तरह एकांकी के प्रमुख तत्व द्वन्द्व का चित्रीकरण इस एकांकी में हुआ है ।

भावनाओं के द्वन्द्व का यह रूप बाद के एकांकियों में और भी स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है । " पृथ्वीराज की आँखें " नाटक का कथानक यद्यपि ऐसी बातों पर आधारित है जो ऐतिहासिक सत्य से परे हैं फिर भी मानसिक आवेग के चित्रीकरण की दृष्टि से यह डा. वर्मा के प्रारंभ कालीन नाटकों में बेजोड़ है । इस में मनोवेग इतनी ऊंचाई तक बढ़ता है कि मानों वह उतरना ही नहीं चाहता । दिल्ली और अजमेर को भौंह के संकेत से नचानेवाले सिंह विक्रम पृथ्वीराज नेत्रहीन होकर गोरी की कैद में बंद है । भावावेश में आकर गोरी के अत्याचारों का वर्णन अपने कवि चन्द के सामने करता है ।

---

(१) डा. रामकुमार वर्मा, --- विचार दर्शन -- पृ १२३ - १२५.

उस का आवेश इस हद तक बढ़ जाता है कि चन्द के " महाराज " कहने पर क्रोध से कांप उठता है । उस का मनोवेग इस तरह एक एक सीढ़ी पर चढ़ते हुए अंतिम सीढ़ी तक पहुंचता है । अपने गौरव से च्युत बनने पर उस के मन में कितनी वेदना उत्पन्न होती है । कितनी ग्लानि से उस का मन भर जाता है । वह सोचता है कि पृथ्वीराज के गौरव से गिरे हुए प्राणी को प्राणों की आवश्यकता ही क्या रह गई ? लेकिन उसका शौर्य किस तरह लुप्त हो जाता ? चन्द का यह कथन सत्य है कि "शेर पिंजड़े में बंद रहने पर भी शेर ही कहलाता है । " पृथ्वीराज का मानसिक आवेग स्थिरता को तभी प्राप्त करता है जब चन्द के प्रस्ताव को स्वीकार कर दूसरे दिन गौरी उस की तीरन्दाजी देखना चाहता है । उस में आत्मविश्वास का अभाव नहीं है । दूसरे दिन उस का लक्ष्य गौरी के सब अत्याचारों का बदला लेने में समर्थ है । चरमसीमा तक पहुंचकर एकांकी की समाप्ति यहीं हो जाती है । इस एकांकी में पृथ्वीराज के मानसिक भावों के उतार-चढ़ाव का सुन्दर चित्रण हुआ है ।

" दस मिनट " तथा "एक्ट्रेस" तक आते आते भावों के उतार-चढ़ाव के चित्रीकरण में कुशलता और भी अधिक प्रकट हुई है । इन दोनों में न केवल चरित्रगत विशेषताओं के उन्मीलन की ओर ही एकांकीकार की दृष्टि रही बल्कि उस के साथ साथ संघर्ष से युक्त मनोगत भावों के सफल व्यक्तिकरण पर भी अधिक ध्यान रहा है । इन दोनों एकांकियों का उद्घाटन समस्या के रूप में एक कौतूहल के साथ होता है जिस से दर्शक उनकी समाप्ति के लिए व्यग्र हो उठते हैं । दोनों नाटकों में ः अन्तर्द्वन्द्व और घटनाओं का घात- प्रतिघात प्रमुख है । " दस मिनट " में अपनी बहन को मैली दृष्टि से देखने वाले केशव की हत्या कर, अपने मित्र महादेव के कमरे में प्रवेश करना काफी कुतूहलोत्पादक घटना है । महादेव के यह कहने पर क कि पापी की सजा छुरी आंखों में घुसेड़ देने से ही पूरी होती है, बलदेव का पुनः-- चला जाना और दूसरे ही क्षण में पुलिस इन्सपैक्टर का आगमन होना ----भी कम कुतूहल की बात नहीं । विषम परिस्थितियों को इस तरह संवार कर कथानक की गति को क्षिप्रता प्रदान की गई है । बलदेव की घबराहट और महादेव की निश्चलता दर्शकों के कौतूहल को तीव्र से तीव्रतर, तीव्रतर से तीव्रतम स्थिति तक पहुंचा देती हैं । क्योंकि महादेव इन्सपैक्टर से कहता है कि दस मिनट में खूनी इसी कमरे में आप को मिल जायेगा । दर्शक सोच में पड़ जाते हैं x । खून से रंगे कपड़ों को उतरवा कर महादेव बलदेव को बिदा देने पर दर्शकों को थोड़ा आश्वासन मिलता है ।

x कि दस मिनट के उपरान्त अपने मित्र बलदेव को इन्सपेक्टर के हाथ सौंप देगा क्या ? दस मिनट उन के लिए भारी पड़ जाते हैं ।

महादेव की गंभीर व मुद्रा उस की निश्चलता को प्रकट करती है । खूनी के वेष में महादेव अपने को पुलिस के हवाले कर देता है और उधर बलदेव और उस की बहन पुकारते रहते हैं । उन की पुकार के साथ एकांकी का अंत होता है । मित्र के प्रति कर्तव्य मिश्रित प्रेम भावना ने महादेव को अपनी आहुति देने को बाध्य किया है । उस की सांसों के स्वर में सचमुच उसका बलिदान गूंज उठा है । इस एकांकी में महादेव के मानसिक भावों का अंकन हुआ है । न्याय और अन्याय, धर्म और अधर्म, प्रेम और कर्तव्य इन द्वन्द्व भावों में से न्याय और धर्म की विजय होती है ।

"एक्ट्रेस" का कथानक भी इसी तरह घटनाओं के घात प्रतिघातों से कुतूहल की सृष्टि करता है । समस्या परित्यक्ता भारतीय नारी की है । जीवन के सीधे पथ पर चलने की अभिलाषा को जब परिस्थितियों ने मिट्टी में मिला दिया है तो इतनी तीव्र प्रतिक्रिया होती है कि उस व्यक्ति को पहचानना भी टेढ़ी खीर बन जाता है । प्रभात कुमारी का जीवन रहस्य यही है । आधुनिक सामाजिक मर्यादाओं से अपरिचित लज्जा-शील युवती पत्नी प्रभात कुमारी को पति का तिरस्कार मिला था । उसका दोष एक मात्र यह था कि पति के मित्रों के सामने जाने में उसकी स्वाभाविक लज्जा अड़चन डालती थी । उस के इस व्यवहार से अप्रसन्न अंग कुमार वर्मा ने उसे त्याग दिया । पतिसे परित्यक्ता प्रभात कुमारी " प्रभा " के नाम से प्रसिद्ध अभिनेत्री बनी थी । उस के जीवन में बाह्य दृष्टि से सब कुछ प्राप्त था । धन की कमी नहीं थी । यश का अभाव नहीं था । किन्तु इस ढंग के जीवन की चाह उस में एकदम नहीं थी । उसका नारी हृदय परिवार के स्वर्गिक सुख से वंचित होकर करुण राग आलाप रहा था । अंग कुमार वर्मा अपनी दूसरी पत्नी के साथ अपनी प्रिय अभिनेत्री प्रभा से मिलने आता है । उसे यह मालूम न था कि प्रभात कुमारी ही प्रभा है । प्रभात कुमारी उस को पहचान लेती है । उस की अनुपस्थिति में, अनजान में अपना सारा परिचय दूसरी पत्नी कमला कुमारी से दे देती है । जब कमला उसको अपने साथ ले जाना चाहती है और पति पर सारा रहस्य प्रकट करना चाहती है तो प्रभा मना करती है । पारिवारिक जीवन की चाह रखते हुए भी उस पथ पर पुनः लौट पड़ना उस के लिए असंभव है । अतः प्रभात कुमारी " मंदार " में डूब कर अपनी बलि दे देती है । प्रभात कुमारी के मानसिक आवेगों का सुन्दर सफल चित्रण इस एकांकी में किया गया है । करुणा-जनक घटनाओं का उन्मीलन अत्यन्त सहज ढंग से हुआ है ।

अब रहा चंपक नामक एकांकी । यह सामाजिक इतिवृत्त पर आधारित है । इस में एक करुणार्द्र किशोर कवि के आदर्शों का यथार्थ में परिणत कर नाटक का रूप दे दिया गया है । उस का आदर्श है उपेक्षित तथा दुःखियों की सहायता करना । वह एक घायल कुत्ते की सेवा कर उसे स्वस्थ बना देता है । उस कुत्ते चंपक के प्रति उस का मोह इतना बढ़ जाता है कि " चंपक " के नाम पर कविता भी करता है । लेकिन परिस्थिति वश चंपक कोबेचना पड़ता है । इस के पश्चात् एक भिखारी उस के द्वार आता है जिस ने चम्पक को इसलिए घायल किया था कि उस की अपेक्षा कुत्ता ही अधिक सुखी था । किशोर कवि सेवा व्रती है । वह चंपक के चले जाने पर किसी दूसरे पीड़ित व्यक्ति की राह देख रहा था तो यह अपराधी दीन भिखारी उस के सम्मुख आया । सारे वृत्तान्त के सुनने के पश्चात् भी कवि के मन की दया भावना में किसी प्रकार का अंतर नहीं पड़ता । वह भिखारी के अपराध को क्षमा कर देता है । उस की दया से पूर्ण आर्द्र हृदय की क्षमा-शक्ति से अपराधी भिखारी में परिवर्तन होता है । वह अपने अपराध को स्वीकार कर पश्चाताप प्रकट करता है । इस एकांकी में चंपक के प्रति कवि की ममता, भिखारी की मनःस्थिति का परिवर्तन दर्शनीय है । मानवीय भावनाओं की उत्कृष्टता इस में स्पष्ट की गई है । अपराधी व्यक्ति भी ऐसी अवस्था में क्षमा करने योग्य है जब कि वह दीन हो । सेवाव्रती को केवल यह लिखना आवश्यक है कि वह प्राणी पीड़ित दुःखित और दीन है कि नहीं ? इस एकांकी में सद्भावों का आदर्शपूर्ण चित्रण इस तरह किया गया है कि वह आदर्श व्यावहार में लाया जा सकता है ।

घटनाओं का मनोरंजन दूसरी स्थिति है । वास्तव में विशेष मनोरंजन से युक्त घटनाओं के चुनने में या ऐसी घटनाओं की कल्पना करने में नाटककार की प्रतिभा प्रकट होती है । जीवन में कितनी ही घटनाएं घटित होती हैं । पर उन में कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं जो कौतूहल पूर्ण प्रश्न उत्पन्न करती हैं और उन प्रश्नों का समाधान प्राप्त करने में एक प्रकार का उल्लास होता है । नाटककार ऐसी ही घटनाओं को प्रधानता देता है । डा. वर्मा के " नहीं का रहस्य " और " परीक्षा " में घटनाओं के मनोरंजन से उत्पन्न कौतूहल अंत तक बना रहता है । " नहीं का रहस्य " वस्तुतः विशिष्ट व्यक्तित्व-निषेध ~~अथवा चरित्र विपर्यय का मनोरंजक अध्ययन~~ है । ~~अंग्रेजी में इस तरह के अध्ययन को~~ का परिस्थितियों के कारण उत्पन्न आत्मशोधन या आत्म निषेध अथवा चरित्र विपर्यय का मनोरंजक अध्ययन है। अंग्रेजी में इस तरह ~~कहते हैं~~ के अध्ययन को A brief study in psychological reverses कहते हैं।

प्रो. हरि नारायण का जीवन एक रहस्य है । युवावस्था की लजीली प्रवृत्ति ने उन के हृदय की सच्ची चाह को प्रकट करने नहीं दी । विवाह के सुनहले स्वप्नों में विचरनेवाले हरिनारायण ने अपनी मनपसंद वधू के चुने जाने पर भी लज्जा के वशीभूत हो कर " नहीं " का उत्तर दिया । इस अस्वीकृति को सच मानकर उन के पिताजी ने विवाह नहीं किया। हरि-नारायण के फूलों के संसार में आग लग गई । फिर जब उन का विवाह दूसरी जगह स्थिर किया गया तो उन्होंने सचमुच हृदय की " नहीं " की । इस तरह से आजीवन अविवाहित रह गये । उन्होंने एकान्त में अपना एक अलग संसार की सृष्टि की । अपनी छात्राओं को ही पुत्रीवत देखते हुए परिस्थितियों के कारण वंचित अपितृ हृदय को सांत्वना दे रहे हैं । अध्या-पन कार्य उन के जीवन की शुष्कता को दूर कर सजीवता प्रदान करता है । छात्र और छात्राओं के सहयोग में रहकर वे जीवन को जीवन समझ रहे हैं । नहीं तो उन के जीवन में रह ही क्या गया है ? " उन के पास केवल स्मृतियों का शव है । उसीको वे चूमते हैं और उसीको प्यार करते हैं । जीवन एक अंधेरा प्रदेश है जहां दिन एक महीने का होता है और रात एक वर्ष की । " अविवाहित व्यक्ति के जीवन के मूल में किन परिस्थितियों का हाथ है ? इस कुतूहलपूर्ण प्रश्न का समाधान नाटक में मिलता है । प्रश्न मनोरंजक और उत्सुकता से युक्त है तो समाधान करुणात्मक तथा दुःखपूर्ण है । प्रो. हरिनारायण के स्वर में स्वर मिलाकर हर एक व्यक्ति यही कामना करता है कि जीव में महत्वपूर्ण कार्यों में युवकों के "नहीं" सदैव "हां" का ही फल दे ।

" परीक्षा " एकांकी में सच्चे हृदय के प्रेम का सफल चित्रण है । वृद्ध पति की युवा पत्नी के संबंध में भी एक ऐसा कुतूहल उत्पन्न होता है कि उन दोनों के जीवन की डोरियां किस तरह के बन्धन में बंधी हुई हैं ? उन के जीवन के प्रति एक विस्मयात्मक कौतूहल स्वतः ही जागृत होता है । क्यों कि यह घटना असाधारण है । असाधारण परिस्थितियों में स्त्री पुरु-षों की मनोस्थिति का अध्ययन काफी मनोरंजक सिद्ध होता है । आजकल के शिक्षित समाज में यह घटना न केवल तीसरे व्यक्ति के ही कुतूहल का कारण बनती है अपितु स्वयं उस वृद्ध पति के मन में भी अपनी युवा पत्नी की मानसिक गहराइयों की थाह लेने की इच्छा उत्पन्न होती है । " परीक्षा " के २० वर्षीय रत्नानाथ की परीक्षा उस के पचास वर्षीय पति प्रो. केदारनाथ अपने वैज्ञानिक मित्र डा. राजेश्वर रुद्र की सहायता से लेते हैं ।

एक तो केदार और रत्ना का विवाह ही असाधारण है, दूसरा " परीक्षा " लेने का विधान भी असाधारण और उत्सुकतापूर्ण है। दर्शकों को अंत तक यह विदित नहीं होता कि दोनों मित्रों ने केवल एक मूला नाटक मात्र खेला है। डा. रुद्र के वैज्ञानिक अनुसंधानों के फलास्वरूप एक ऐसा रस बन रहा था जिस के पीने से बूढ़ा आदमी भी जवान हो सकता है। लेकिन उसका प्रयोग अभी किसी पर नहीं हुआ था। केदार अपने मित्र से अनुरोध कर उस अधूरे रस का पान करता है जिसका फल उल्टा होता है। केदार बिलकुल बूढ़े हो जाते है। बेचारी रत्ना बहुत दुःखी होती है पर वह उस रस का पान कर बूढ़ी होना चाहती है। केदार और रुद्र के मना करने पर भी वह अपने निश्चय पर अटल रहती और रसपान करती। पर इस का परिणाम और आश्चर्य जनक होता है। रत्ना की जवानी में कोई परिवर्तन नहीं होता पर केदार पूर्ववत् हो जाते। बाद में रत्ना को तथा दर्शकों को रहस्य मालूम होता है कि वास्तव में न कोई बूढ़ा हुआ न कोई जवान का रस नहीं, अपितु पिलाकर चाक के पौडर से केदार के बाल सफ़ेद किये गये हैं। " सच्चा प्रेम " वय के अंतर के कारण न घटता है न बढ़ता है। पति के लिए वृद्धा होने के लिए रत्ना संसिद्ध हुई है। यह है भारतीय नारी का मनोवैज्ञानिक अध्ययन।

तीसरी स्थिति जीवन की विविध परिस्थितियों का आकलन है। 'रूप की बीमारी', '१२ जुलाई की शाम', 'एक तोले अफ़ीम की कीमत' और 'रेशमी टाई' इस स्थिति के द्योतक हैं। 'रूप की बीमारी' और 'एक तोले अफ़ीम की कीमत' प्रेम और विवाह से संबन्धित कथानक हैं। ये दोनों नाटक गंभीर वस्तु स्थिति का प्रतिपादन या समस्या का हल प्रस्तुत नहीं करते। धनी सेठ के इकलौते पुत्र रूपचन्द्र अपने पिता के दिल को कष्ट पहुंचाना नहीं चाहता और साथ साथ अपने मन की इच्छा को पूरा करना भी चाहता है। उसका अभिप्राय यह है कि विवाह के पहले लड़के और लड़की एक दूसरे को पूर्ण रूप से जानना आवश्यक है। वह जिस लड़की से प्रेम कर रहा है, उस को अपने घर में लाने के लिए बीमारी का बहाना करता है। डाक्टरों की भी सहायता लेकर बीमारी की दवा संगीत कहलाता है। डाक्टरों ने उस लड़की का नाम भी सुझाया है। इस तरह रूप को जिस लड़की के रूप की बीमारी हो गयी है उसका इलाज पिता को कष्ट दिये बिना किया जाता है। " एक तोले अफ़ीम की कीमत " भी विवाह से संबन्धित है। जहां सेठ का पुत्र मुरारी मोहन एक गंवार लड़की से शादी करना नहीं चाहता और उस के पिता ने बात तय करने का निश्चय किया वहाँ उसी सेठ के मित्र की पुत्री विश्वमोहिनी को इसलिए दुःख होता है कि उस के विवाह के लिए दहेज जुटाते हैं जुटाते उस का पिता गरीब से गरीब हो जाता है।

ये दोनों आत्महत्या कर लेने का निश्चय करते हैं। जब मुरारी मोहन दस तोले अफ़ीम खाने के लिए संसिद्ध होता है तब विश्वमोहिनी दुकान में आकर अफ़ीम मांगती है। बातों के सिलसिले में दोनों को वास्तविक विषय मालूम हो जाता है। दोनों प्रेमी जीवित रहना चाहते हैं।

" १२ जुलाई की शाम " इन दोनों एकांकियों से भिन्न है। अपने पति के यथार्थ चारित्रिक महत्व को न समझकर भटकनेवाली एक पत्नी का हृदय परिवर्तन इस में चित्रित है। आदर्शवादी नाटककार होने के कारण एकांकीकार ने एक ही घटना के धक्के से पत्नी में सुधार की रेखाएं अंकित कर आदर्श को स्थापित किया है। फैशन की पुतली उषा अपने पति जो समाचार पत्र का संवाददाता है, की अपर्याप्त आमदनी से संतुष्ट नहीं है। अपने एक विलासी मित्र अशोक जो उस समय मुन्सिफ़ बना था, के साथ चली जाना चाहती है। अपनी मां की बीमारी का बहाना भी अपने भोले पति को विश्वास दिलाने के लिए करती है। लेकिन अपने पति का दयार्द्र, करुणापूर्ण हृदय के महत्व का गुणगान अपनी एक सहेली से सुनकर वास्तविकता को पहचान लेती है। उस में भी मानवता के मंगल भाव जागृत होते हैं और पति के सुख दुःख में हाथ बंटाने लगती है।

" रेशमी टाई " एक ऐसे शिक्षित व्यक्ति के मनोविज्ञान का अध्ययन है जो अपने दुर्गुणों को सिद्धान्तों के पर्दे में छिपाकर अपने को संभ्रान्त समझता है। नवीन चन्द्र की बाल्यकालीन भ्रष्ट प्रवृत्ति " हाथ सफाई " अज्ञात रूप से उस के जीवन में कार्य करती रहती है। उस की सुशीला पत्नी लीला अपने पति की इस दुर्बलता से परिचित है। नवीनचन्द्र मदन खन्ना की दूकान में रेशमी टाई खरीद कर लाते हैं तो भूल से दूकानदार दो टाई बण्डल में बांध देता है। जब लीला उसे वापस भेजने की बात कहती है तो नवीन-चन्द्र साफ़ इन्कार करते हैं और सोशलिज़्म के सिद्धान्त वाक्य अपने तर्क के लिए प्रस्तुत करते हैं ----- " हम से एक के चार वसूल करते हैं। ऐसे हैं ये कमानेवाले कमीने पूंजीपति। इन पूंजीपतियों की यही सजा है। जानती हो, कालमार्क्स ने क्या लिखा है ? फिलासोफर्स हिदर टू हैव ओनली इण्टरप्रेटेड दि वर्ल्ड इन वैरियस वेज, दि टास्क इज टु चैंज इट्। (दार्शनिकों ने अभी तक संसार की विवेचना भर की है अभी तो इस संसार को बदलना है।) इस तरह अपने दुर्गुणों को सोशलिज़्म या डायलेक्टिकल मैटीरियलिज़्म को बना देता है।

स्वयंसेविका सुधालता खद्दर बेचने आती है तो उस की अनुपस्थिति में एक थान लेकर अलमारी के दराज़ में बन्द कर टहलने चला जाता है । लेकिन उस की पत्नी लीला पति के इस कृत्य को समझ कर स्वयंसेविका को थान का दाम देती है । नवीन के आने के बाद स्वयंसेविका लीला की प्रशंसा करती है तो उस के सिर में चक्कर आता है । पत्नी के स्वभाव ने उसे परिवर्तित किया । उस ने स्वयं रेशमी टाई नौकर के हाथ दूकानदार को भिजवाया और मुख की कालिमा धो डाली है ।

इस तरह तीसरी स्थिति में रामकुमार वर्मा जी की प्रवृत्ति जीवन के विविध पहलुओं का नाटकीय परिधान में अध्ययन करने की ओर है। इन सभी एकांकियों ने शिल्प संबंधी अन्य विशेषताओं भी उपलब्ध होती हैं । इन में संघर्ष की स्थिति है, मनोवैज्ञानिक तथ्यों का स्पर्श है और है मनोरंजन से युक्त व्यंग्य क हां, साथ ही साथ एकांकियों की समाप्ति आदर्श की स्थापना में की गई है । " रेशमी टाई " के नवीन चन्द्र का हृदय परिव-र्तन, " १८ जुलाई " " कौशाम " की उषा का परिवर्तन, नाटककार के आदर्शवादी दृष्टिकोण पर प्रकाश डालते हैं । लेकिन साधारणतया जीवन में उस तरह के परिवर्तन एकदम दर्शन नहीं देते । हृदय परिवर्तन के लिए ऐसे प्रबल आघात की अपेक्षा होती है जिस से पूर्णतया घायल हो कर ही मनुष्य सत्पथका अनुगामी हो सकता है । इन एकांकियों में केवल स्केच की सूक्ष्म रेखाओं की भांति छोटी सी घटनाओं के आरोह-अवरोह चित्रित हैं जिन के आधार पर ये परिवर्तन संभव दिखलाने का प्रयास किया गया है । इस का एकमात्र कारण नाटककार का आदर्श के प्रति अधिक झुकाव है । जो भी हो, इस स्थिति में नाटककार की दृष्टि जीवन की अनेक दिशाओं पर गई है और उन उन दिशाओं के नाटकीय क्षणों को मूर्तिमान रूप देने का सफल प्रयत्न किया गया है ।

चौथी स्थिति मनोविज्ञान की गहराइयों में प्रवेश करना है । इस का अर्थ यह नहीं कि इस के पहले की स्थितियों में रचित एकांकियों में मनोविज्ञान का पुट नहीं है । इस स्थिति तक आकर उन का मनोवैज्ञानिक अध्ययन पूरी पराकाष्ठा तक पहुंच गया है । गहन मनोवैज्ञानिक तथ्यों का मर्मस्पर्शी चित्रण इन कृतियों में हुआ है । तृतीय स्थिति के एकांकियों की आलोचना करते हुए हम ने लिखा है कि हृदय परिवर्तन के लिए बड़े आघात की आवश्यकता पड़ती है । जिस प्रकार अग्नि में तप्त होने के उपरान्त ही सुवर्ण की कांति चमक उठती है उसी प्रकार मानसिक संघर्ष की अग्नि में पूर्ण रूपेण जलने के उपरान्त ही मनुष्य की सात्विक प्रवृत्ति अपने उज्ज्वलतम रूप में प्रकाशित हो उठती है ।

तृतीय स्थिति में रचित एकांकियों में केवल सूक्ष्म रेखाओं को खींचकर आदर्श की प्रतिष्टा की गई है। चतुर्थ स्थिति में हम एकांकीकार में यह नयी प्रमुख प्रवृत्ति देखते हैं कि उन्होंने मन के एक पहलू पर प्रकाश डालते हुए उन उन परिस्थितियों की सृजना की थी जिस से मानसिक परिवर्तन संभव है। " चारुमित्रा " संग्रह के एकांकी इस प्रवृत्ति के द्योतक हैं। इन नाटकों में तूलिका के हलके स्पर्श से खींची सूक्ष्म तथा पूर्ण रूप से अंकित है। हम यहां वास्तविकता का भी अनुभव करते है और साथ ही साथ उस आचरणयोग्य और अनुकरणीय सच्चे आदर्श के प्रति हमारे मन में यह भावना कभी नहीं जागती कि यह असंभव बात है।

" चारुमित्रा " में सम्राट अशोक के हृदय परिवर्तन का इतिवृत्त अंकित है। इतिहास में यह कलिंगयुद्ध में अशोक के हृदय परिवर्तन की घटना कितना महत्वपूर्ण है। सम्राट अशोक के जीवन में उस घडी का कितना मूल्य है। डा. वर्मा ने अपने ऐतिहासिक नाटकों में ऐसे कल्पित पात्रों की सृष्टि भी की है जो इतिहास के व्यक्ति न होते हुए भी तत्कालीन समाज के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में हमारे सामने आते हैं। " चारुमित्रा " भी एक ऐसी कल्पित नारी पात्र है जिस के अपूर्व बलिदान अशोक के परिवर्तन का सब से प्रधान कारण बन जाता है। डा. वर्मा द्वारा कल्पित घटनाएं ऐसी प्रतीत होती है मानो सच्ची घटनाएं हों। इस में अशोक का मानसिक परिवर्तन क्रम रूप से घटनाओं के घात प्रतिघातों के कारण होता है। उस के लिए एक लंबी भूमिका बांधी गई है। मनोवैज्ञानिक नाटक में अन्तर्द्वन्द्व का प्रमुख चित्रण करना अपेक्षित है। अतः नाटक का प्रारंभ ही ऐसी स्थिति से होता है जिस में विरोध की तेजस्वी शक्तियाँ निहित हो काम करती है। " चारुमित्रा " बाल्यकाल से अशोक की सेविका है पर है जन्म से कलिंग बाला। सम्राट अशोक के कलिंग पर आक्रमण करने पर उन्हें यह संदेह होना अत्यन्त स्वाभाविक है कि कलिंग बाला चारुमित्रा सेविका होते हुए भी शत्रु पक्ष के होने के कारण विश्वासघातिनी हो सकती है। यही संदेह की वृत्ति नाटक के द्वन्द्व का बीज है। कुशल कलाकार ऐसे द्वन्द्व भावों को एक साथ समानान्तर रेखाओं की भांति रख देता है जिन की विषमता से सत्य का स्वरूप भासित होता है। चारुमित्रा के मन में अपने कलिंग के प्रति अपार प्रेम है, देश के गौरव के प्रति ध्यान है। पर साथ ही साथ अपने स्वामी के प्रति उस में श्रद्धा है, सम्मान की भावना है और है उस के लिए मंगल कामनाएं। देश प्रेम और स्वामिभक्ति दोनों में से कौन श्रेष्ट है ? एक ओर देश के लाखों वीर अपनी आहुति दे रहे हैं, लाखों माताएं रोदन कर रही हैं।

दूसरी ओर अपने स्वामी अशोक विजयलक्ष्मी का वरण करने लाखों प्रयत्न कर रहा है। यह है चारुमित्रा की मानसिक स्थिति। इस नाटक की दूसरी नारी पात्र महारानी तिष्यरक्षिता है जो अपनी नारीसुलभ कोमल भावनाओं के कारण युद्ध की भयंकर भीषणताओं को सहन नहीं कर पातीं। सम्राट के वियोग को असह्य समझकर युद्ध क्षेत्र में उन्हीं के साथ आयी हुई तिष्यरक्षिता के मन में इतनी ग्लानि उत्पन्न होती है कि वह चाहती है कि रानी होने की अपेक्षा साधारण स्त्री होना सुखदायक है। क्योंकि तभी वह आत्म बलिदान कर महाराज के मन की दिशा बदल सकती है।

ऐसी उपयुक्त घटनाओं का सृजन नाटककार ने किया है कि इन तीनों पात्रों का मनोविज्ञान प्रकाश में आवे। विशेष रूप से चारुमित्रा के चरित्र के उज्जवल पक्ष के अंकन पर नाटककार का अधिक ध्यान है।

एकान्त और युद्ध के हिंसकाण्ड से अप्रसन्न महारानी सेविका चारुमित्रा से नृत्य करने का अनुरोध करती है। सम्राट अशोक चारुमित्रा के पैरों की नूपुर ध्वनि सुनते ही क्रोधित हो जाते हैं। उन के संदेह के बीज के लिए नूपुर पानी का काम करते हैं। भैरवी के नृत्य के रंगस्थल में नूपुरों की मधुर ध्वनि शोभा कैसे पाती है? अशोक समझते हैं कि उन के युद्ध के उत्साह में कोमलता भर कर चारुमित्रा अपने कलिंग के संकट को दूर करना चाहती है। उन की भाव श्रृंखला यहीं रुकती नहीं। वे सोचते हैं कि उस ने महारानी के द्वारा कोमलता का संचार करने की नीति अपनायी है। तिष्यरक्षिता के स्वभाव को दया से उस ने भर दिया है। महारानी के यह कहने पर कि चारुमित्रा का कोई अपराध नहीं है, अशोक चारुमित्रा को क्षमा करते हैं। तत्पश्चात् निरीह शिशु की हत्या सैनिक करते हैं और शिशु की माता के करुण विलाप से सम्राट का मन विचलित होता है। न्याय करना चाहते हैं पर शिशु की माता आत्महत्या कर लेती है। यह दूसरी घटना अशोक के हृदय को बड़ा आघात पहुंचाती है। एक बच्चे की माँ ने उस के सारे साम्राज्य को तुच्छ सिद्ध कर दिया है। उन्हें अवगत होता है कि राज्यसत्ता और वैभव से भी उन्नत एक सत्ता है, वह है प्रेम। यों तो अशोक की कलिंग पर विजय हुई पर उस स्त्री की आत्महत्या ने उन के ध्यान को संग्राम में मरे हुए लाखों वीरों की माताओं की ओर आकर्षित कर लिया है। युद्ध और विजय संबंधी उन के दृष्टिकोण को एक नयी दिशा मिली है। चारुमित्रा के बलिदान की घटना तीसरी है जिस से अशोक के हृदय का पूर्ण परिवर्तन होता है। सम्राट के बाहरी शिविर में गुप्त रूप से छिपे चार कलिंग वीरों का अकेली चारुमित्रा ने सामना किया। उन को धिक्कारा कि, " यद्यपि यदि महाराज अशोक को मारना

है तो युद्ध में तलवार लेकर क्यों नहीं जाते । यहां चोरों की तरह घुसकर एक वीर पुरुष से छल करते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आती ?"
उन सैनिकों ने चारुमित्रा को लालच दिया, कलिंग की विजय का स्वप्न दिखलाया पर चारुमित्रा में जितनी देशभक्ति है उतनी ही स्वामिभक्ति है । वह अपने स्वामी के विश्वासघात नहीं कर सकती । उस नेउन पर ऐसा आक्रमण किया कि दो सैनिक घायल हो कर भाग गये । लेकिन तीसरे की तलवार के आघात से चारुमित्रा घायल हो कर गिर पड़ी । उसी समय बौद्ध भिक्षु उपगुप्त चारुमित्रा के मानसिक के इस क्लेश को दूर करने के उद्देश्य से वहां गये । चारुमित्रा के इस अमर कृत्य ने अशोक की आंखें खोल दीं । अत्याचारी, क्रूर अशोक अहिंसाव्रती बौद्ध धर्मावलंबी, तथा करुणा के सम्राट हो गये ।

इस तरह अशोक के परिवर्तन का मनोविज्ञान धीरे धीरे उपर्युक्त घटनाओं के रूप में विकसित हुआ है । इन तीनों घटनाओं के साथ साथ रानी तिष्य-रक्षिता का अनुरोध भी अशोक के परिवर्तन में सहायक हुआ है । हर एक पात्र का मनोविज्ञान इस में स्पष्ट रूप से अंकित किया गया है ।

इस संग्रह में संगृहीत शेष तीन एकांकियों में " रजनी की रात " की पृष्ठभूमि सामाजिक है और " उत्सर्ग " तथा " अन्धकार " की दार्शनिक है । इन तीनों में भी चारुमित्रा की तरह मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । हां, इन में जीवन को अन्य कोणों से देखने का प्रयास हुआ है । " रजनी की रात " की रजनी आधुनिक विचार रखनेवाली विदुषी नारी है पर उस के सोचने का ढंग ही गलत है । सामाजिक बन्धनों में, पुरुषों के स्वार्थ के चुंगल में फंसे नारी-जगत को मुक्त करना स्वतंत्र होकर अपने पैरों पर खड़े रहने की शक्ति को जागृत करना कितना ही वांछनीय है । इस तरह की विचारधारा नवीन युग की, वह भी पाश्चात्य चिंतन से प्रभावित लोगों के मस्तिष्क से निकली है । इस बौद्धिक युग में मस्तिष्क का सब क्षेत्रों पर कितना आधिपत्य है -- यह कोई छिपी हुई बात नहीं है । पर इस मस्तिष्क के संचालक को भी एक व्यवस्थित रूप देने की क्षमता मानव हृदय में निहित है । न केवल मस्तिष्क से ही समाज का निर्माण तथा उस के नियमों का निर्धारण नहीं हुआ अपितु मानव हृदय की संयमित मंगलमयी कोमल भावनाओं का भी उस में प्रधान हाथ है । नयी हवा के लोगों के बौद्धिक विचारों पर प्रकाश डालते हुए नारी की वास्तविक हार्दिक कोमलता का दूसरे शब्दों में बलहीनता का चित्रण इस एकांकी में किया गया है ।

सुशिक्षिता रजनी की विचार श्रवंति इस प्रकार प्रवाहित होती है। --- दुनिया बहुत धोखेबाज़ है। बहुत बनी हुई है। उस में स्वार्थ ही स्वार्थ है। भाई भाई में स्वार्थ है। पुरुष और स्त्री में स्वार्थ है। पिता पुत्री में स्वार्थ है। लड़की के खराब निकल जाने पर पिता मुंह देखना भी पसंद नहीं करता। उस का प्रेम बालू की दीवार की तरह एक मिनट में गिर पड़ता है। पुरुष स्त्री पर अधिकार दिखलाता है जैसे जिंदगी में अधिकार के सिवाय कुछ है ही नहीं। अधिकार की भावना में जिन्दगी का उत्साह खराब हो जाता है। पुत्र बिना किसी शासन के जो प्यार करता है वह तो हृदय से उमड़ता हुआ प्यार होता। स्वभावत: स्त्री जैसा प्यार करती वैसा एक डरी हुई, दबी हुई स्त्री नहीं कर सकती। यह समाज का अन्याय है।" इसी विचार धारा में तिनके की तरह प्रवाहित होकर रजनी अपने एकमात्र पिता से दूर और एकांकी जीवन बिताना चाहती है। जीने के ढंग में कोई नयापन नहीं है अत: वह स्कूल की नौकरी भी छोड़ देती है। वह सोचती है कि " परिवार में डूबा हुआ आदमी कुछ नहीं कर सकता। जिन्दगी की जरूरतों को पूरा करता हुआ सोता है, जागता है। उसे विवाह करना पड़ता है, बच्चों का भरण पोषण करना पड़ता है। बुड्ढा होना पड़ता है और मर जाना पड़ता है। एक ही रास्ता, एक ही चाल, वह समाज का बन्धन नहीं चाहती।। ममता और मोह के बन्धनों को तोड़कर स्वतंत्र विचारों में विश्वास रखती है।

काश्मीर में रजनी के समान एक अन्य परिवार भी कुछ दिन बिताने के लिए आता है। उस परिवार की लड़की कनक से रजनी की मैत्री हो जाती है। कनक का पात्र चारित्रिक वैषम्य के लिए सृजित हुआ है। कनक को रजनी की बातें पसंद नहीं आती। उस के अनुसार जिंदगी का आनंद लेना जिंदगी को पहिचानना है। वह सामाजिक बन्धनों को इसलिए आवश्यक मानती है कि उन से आदमी स्वतंत्र हो सके। ~~वह पूछती है कि उन से आदमी स्वतंत्र हो सके~~। वह पूछती है कि अपनी बेतरतीबी से बढ़ती
पर क्या नहीं बढ़ सकेगा? बन्धन को उन्नति के रास्ते
हुई इच्छाओं को रोक कर वह उन्नति के रास्ते में रोड़ा समझना नहीं चाहिए। बंधन स्वतंत्रता का सहायक है। कनक का भाई आनंद के विचार रजनी के विचारों से मेल खाते हैं। वह भी स्वतंत्रता का पुजारी है। लेकिन वह समाज को त्याग कर एकान्त जीवन का समर्थन नहीं करता। उस के अनुसार समाज से मुंह मोड़ कर एकान्त में चले जाना तो अपनी हार स्वीकार करना है। इस को एक तरह का भस्कैप ही कह सकते हैं। सबब समाज मख्त बिगड़ा हुआ जानवर है।

अगर हम उसे पुचकार कर अपने वश में नहीं कर सकेंगे तो ऐसी गोली मार देना चाहिए कि वह तकलीफ़ से कराहने लगे। मनुष्य स्वतंत्र रहे और साथ ही साथ अपने सिद्धान्तों का पक्का भी रहे। समाज को तोड़-फोड़ कर फिर से बनाये, नये सिद्धान्त रचे, नये विचार सोचे।

रजनी एकाकी रहने का निश्चय कर अपने पिताजी को गाँव भेज देती है। शाम को उसे मालूम होता है कि आनन्द और कनक का पूरा परिवार दूसरे दिन सुबह स्वग्राम जानेवाला है। रजनी चिन्तन करने में तो पटु है लेकिन वह जीवन में कभी अकेली नहीं रही। यद्यपि नौकरों के साथ वह ठहरी है तथापि पिताजी की अनुपस्थिति के कारण अपनेको एकदम एकाकिनी अनुभव करती है। आनंद से जो चर्चा की गई है वह सब पुनः उस के मस्तिष्क में चलचित्र के कथोपकथनों की भांति चक्कर काटने लगती है। जिस मोह ममता से वह दूर भाग जाना चाहती है उन्हीं से उसका हृदय भरा रहता है। अब वह अनुभव करती है कि पिताजी को अपने विचारों के कारण भेज देना बड़ा अन्याय और पाप है। जब वह सोचती है कि अगले दिन से आनंद और कनक का सांगत्य भी नहीं रहेगा तो उसका मन बैठ जाता है। वह अपने मानसिक संतुलन को खो बैठती है। हजार कोशिश करने पर भी उस को नींद नहीं आती। एक ओर एकाकी पन का डर दूसरी ओर प्रेम और ममता का बन्धन उस के हृदय की शान्ति को छीन लेते हैं। उसी रात को किसी एक बुढ़े की लड़की शशि को डाकू लोग उठा ले गये और उस बुढ़े के चीत्कारों को सुनकर रजनी द्रवित हो जाती है। वह चाहती है कि रिवालवर लेकर उन डाकुओं का सामना करे। उसकी हिम्मत तो नहीं पड़ती। इतने में आनंद बन्दूक हाथ में लिये रजनी के डेरे में आता है और उसका कुशल पूछता है। वह यह भी बता देता है कि डाकुओं को डराने के लिए उस ने फायर किया तो वे लोग उस लड़की को छोड़कर चले गये और बुढ़े पिता को सौंप कर आया है। आनंद रजनी को सतर्क रहने की सलाह देता है। यह घटना रजनी के मन को बड़ा आघात पहुंचाती है। उसके विचारों की दिशा परिवर्तित हो जाती है। नारी के हृदय की कोमल भावनाओं का आवेग इतना बढ़ जाता है कि उस के मस्तिष्क के विचार हवा में उड़ जाते हैं। रजनी निर्णय कर लेती है सुबह वह भी आनंद के परिवार के साथ गांव चली जायेगी। उसी वक्त वह कनक को खबर भेज देती है। एकांकी की समाप्ति इसी चरम सीमा पर आकर हो जाती है।

इस तरह इस एकांकी में आधुनिक विदुषी नारी की मानसिक स्थिति का विश्लेषण किया गया है।

"उत्सर्ग" एकांकी में भी मनोविज्ञान के सहारे पात्रों का चरित्रांकन किया गया है। इस कथावस्तु का मुख्य प्रश्न यह है कि व्यक्तिगत कर्तव्य तथा सामाजिक कर्तव्य के बीच में जब संघर्ष उत्पन्न होता है तो मनुष्य को किस कर्तव्य का पालन करना विधेय है ? प्रेम और कर्तव्य के बीच के द्वन्द्व में किस पक्ष का अधिक बल रहता है ? यह कथा वस्तु पुनर्जन्म और प्रेतात्माओं की पृष्ट भूमि पर रची गई है। महान वैज्ञानिक डाक्टर शेखर अपनी प्रेमिका छाया देवी के प्रेम से इसलिए उदासिन हो जाता है कि अपने मृत मित्र की विधवा पत्नी और पुत्री मंजुल के पोषण का भार उठाना वह अपना कर्तव्य समझता है। शेखर अपने मित्र को अपने से अधिक प्रेम करता था। जब उस के सम्मुख अपने व्यक्तिगत जीवन के सुखों का प्रेम-भरा संसार था तो कर्तव्य निष्ठ जीवन की पुकार सुनाई पड़ी। इस संघर्ष में मित्र के परिवार के प्रति कर्तव्य ने विजय पा ली तो शेखर ने छाया-देवी के संसार में आग लगा दी। प्रेम से वंचित छाया दु:ख तथा वेदना से पीड़ित होकर मर जाती है। प्रेत बनने के उपरान्त भी शेखर के प्रति उसका प्रेम और आकर्षण वैसे ही बने रहते हैं और साथ ही साथ उस के मन की प्रतिहिंसा की चिनगारी भी सुलगी रहती है। वह डा. शेखर को दण्ड देने के लिए मित्र की पुत्री मंजुल को अपने पास ले जाना चाहती है। प्रेतात्माओं तथा पुनर्जन्मों पर खोज करने वाले डाक्टर ने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया है जिस के द्वारा वह मृत लोगों से वार्तालाप करता रहता है। संपूर्ण मनुष्य समाज का उपकार करना उसका ध्येय था। संपूर्ण जीवन बिताने की चाह थी। वह यन्त्र के सहारे छायादेवी की प्रेतात्मा को निमंत्रण देता है और मित्र की पुत्री मंजुल के लिए उस से क्षमा मांगता है। अपने मानसिक संघर्ष की कहानी सुना देता है। " प्रेम को ठुकराकर सेवा के महत्त्व को स्थापित करना मेरा जीवन लक्ष्य रहा है। मैं समझता था देवी कि तुम्हें मेरे सेवाव्रत से संतोष होगा। आजन्म अविवाहित शेखर के प्रति तुम करुणा और सुख प्रकट करोगी। लेकिन मेरे आत्म - बलिदान का कोई मूल्य नहीं रहा। मेरे अपराध को क्षमा कर मंजुल बेटी को प्राणदान दो।" लेकिन छायादेवी का भी मन था। उस के प्रेम का भी महत्त्व था। डा. शेखर ने सेवा व्रत को अधिक महत्त्व दिया। छायादेवी की प्रेतात्मा उसे क्षमा नहीं करती। वह पूछती है -------" स्त्री के हृदय में आग लगाकर त्याग का निर्मल जल पीते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आई ?" प्रेम और सेवाव्रत दोनों कर्तव्यों का पालन शेखर को करना चाहिए था। लेकिन वह कमजोर ही नहीं कायर भी था। वह डर के मारे छायादेवी की ओर देखता तक नहीं था कि उस के दर्शन से सेवाव्रत से कहीं डिग न जाय। छायादेवी की प्रेतात्मा डा. शेखर के सेवाव्रत का पूर्ण तरह से उपहास करती है।

वह कहती है ---- " स्त्री के सच्चे प्रेम की सीमा नहीं जानते और मृत्यु का रहस्य खोजने में व्यस्त हो । -- - - संयम की जंजीर से जकड़े हुए सन्यासी , दूसरे का हृदय जलाना भी पाप की परिभाषा में आ सकता है । उस पाप का परिणाम देखने की शक्ति क्या तुम में नहीं है ? मेरी मृत्यु देखने की शक्ति तुम में थी तो मंजुल की मृत्यु देखने की की शक्ति .... भी तुम में होना चाहिए । डा. शेखर मित्र पुत्री मंजुल के जीवन की रक्षा के लिए अपने अनुसंधान यंत्र को तोड़-फोड़ डालता है । डा. शेखर अगर चाहता तो अपनी वैज्ञानिक खोज की सुरक्षा के लिए मंजुल की मृत्यु से भयभीत नहीं होता । जिस कर्तव्य तथा सेवा भाव से उस ने अपने व्यक्तिगत प्रेम को ठुकरा दिया था उस को अंत तक निभाना आवश्यक ही नहीं था, उसका अनिवार्य कर्तव्य भी था । अपने संपूर्ण जीवन के श्रम के फलस्वरूप जो यन्त्र बना था उस का नाश करना उस के स्वभाव के अनुकूल ही था । उस के जीवन में दो बार परीक्षा के क्षण आये थे । एक, छायादेवी के प्रेम का प्रश्न दूसरा, मंजुल को मृत्यु से रक्षित करने के लिए यन्त्र का नाश -- दोनों संघर्ष युक्त क्षणों में उस ने सेवा व्रत के कर्तव्य को ही अधिक महत्व दिया है । दोनों परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने के लिए उसे बड़े-से बड़े त्याग करने पड़े । पहली परीक्षा के लिए प्रेम के बन्धन का उत्सर्ग किया तो दूसरी परीक्षा में अपने जीवन भर के श्रम से निर्मित अनुसंधान को नष्ट कर दिया । इस तरह इस एकांकी में व्यक्तिगत कर्तव्य और सामाजिक कर्तव्य के मध्य का संघर्ष चित्रित हुआ है । डा. शेखर के विचार जितने सत्य हैं । उतने ही सत्य है छायादेवी के विचार । इन दोनों की मानसिक स्थिति अपने अपने स्थान पर ठीक है । डा. वर्मा ने दोनों पात्रों के मानसिक आवेगों का चित्रण पूर्ण सहानुभूति तथा सच्चाई के साथ किया है । मनोवैज्ञानिक अध्ययन के परि-णाम स्वरूप निर्माण कालीन चौथी स्थिति में इस तरह के एकांकियों की सृजना हुई है ।

इस संग्रह के अंतिम एकांकी " अंधकार " को एक प्रकार का दार्शनिक रूपक कह सकते हैं । इस में प्रेम और वासना का सापेक्ष संबंध प्रदर्शित किया गया है । प्रेम प्रकाश है, वासना उसका अंधकार है । अंधकार मनुष्य के लिए अनिवार्य है । उस का दमन उसे दूर करने का प्रयत्न अवांछनीय है । प्रेम बिना वासना के नहीं हो सकता । वासना का अंधकार मिटाये नहीं मिटता । वह रहेगा ही । उसे अनुशासित करने का परिणाम भी अशुभ निकलेगा । इस में यह भी स्पष्ट किया गया है कि धर्म और प्रेम में भी विरोध है । धर्म जीवन के लिए विष है, धर्म के कारण ही मनुष्य का जीवन अंधकार से भर उठता है । इस दर्शन को प्रतिपादित करने के लिए उपयुक्त कथावस्तु का चयन एकांकीकार ने किया है । एक भूभाग पर प्रकाश और दूसरे भूभाग पर अंधकार छाया रहता है । भूमि पर

व्याप्त इस अंधकार की भी रहस्यमयी कहानी है। विश्व गुरु ब्रह्म के नौ पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई। वह कन्या थी अत्यन्त सुन्दर सरस्वती। पिता होते हुए भी कन्या सरस्वती को काम भाव से चाहने लगे। तो पुत्रों ने अधर्मपथ गामी पिता से प्रार्थना की -- विश्वगुरु, वह कलंक पथ है। उस पर अपने पवित्र हृदय को गतिशील कर आप भविष्य की सृष्टि को दूषित न कीजिए। हंस के वाहन पर आप का कलुष शरीर पुण्य पर पाप की तरह ज्ञात होगा। ब्रह्मा ने लज्जित होकर उस कामुक शरीर का परित्याग किया। अंधकार वही कलुष शरीर है। प्रजापति अपने पिता के कलंक को दूर कर सदा के लिए अंधकार को मिटा देना चाहता है। अंधकार पाप से उत्पन्न हुआ है जिस से तामसी रहस्य में पाप के विकास की सीमाएं बहुत दूर तक फैल जाती है। विश्व कर्मा ब्रह्मा प्रजापति से कहता है कि अंधकार का रहना अनिवार्य है। मेरे पाप की कलिमा बनी रहे। लेकिन प्रजापति अपनी इच्छा की पूर्ति करना चाहता है। अंधकार का नाश तभी संभव होगा जब विवेक बुद्धि हर घड़ी काम करती रहती है। प्रजापति ऐसे पुरुष और स्त्री का निर्माण करते जो मर्यादा की रेखा से व्यवस्थित होंगे। बुद्धि की विभाजक रेखा से एक रंग को दूसरे रंग से मिलने का अवसर नहीं मिलता। पिता पुरुष, कन्या स्त्री को देखकर भी न देखे, छूकर भी न छुये। प्रेम करता हुआ भी प्रेम न करे। प्रजापति के पवित्र कक्ष में उसकी अनुपस्थिति में, विद्याधर और मेनका प्रणय का वार्तालाप कर रहे हैं। उन दोनों को दण्ड देते हुए उन्हें के द्वारा प्रजापति अंधकार को दूर करना चाहता है। विद्याधर को स्त्री तथा मेनका को पुरुष बनाकर भूलोक में भेज देते हैं। लेकिन माया भी अंधकार का समर्थन करती है। वह कहती है कि उसका निर्माण कार्य अंधकार में ही होता है। अंधकार का रहना आवश्यक है। अंधकार तो प्रकृति का विश्राम है। जिस प्रकार उज्जवल फूल के विकास के लिए काली मिट्टी की आवश्यकता है, पुण्य के विकास के लिए पाप की पृष्ठभूमि है, उसी प्रकार प्रकाश के विकास के लिए अंधकार की महत्व को इन शब्दों में स्पष्ट करते हैं ---- देवताओं की सात्विक भावनाओं के साथ राक्षसों की तामासिक भावनाएं भी रहेंगी। ब्रह्मा सब का पालन कर सृष्टि को संतुलित करते हैं। अंधकार को विनाश करने की इच्छा रखनेवाला प्रजापति मन्वंतर की समाप्ति के हो जाने पर घोर अंधकर में विलीन हो जाता है। भूलोक में स्त्री, पुरुषों का अनुभव ग्रहण कर विद्याधर और मेनका पुनः आ जाते है। उन का अनुभव भी इसी बात को घोषित करता है कि प्रजापति का धर्म जीवन का विष है। वही सब से बड़ा अंधकार है। दोनों इस धर्म के पालन करने में असमर्थ हुए, एक ने आत्महत्या की तो दूसरे ने प्राणदण्ड पाया। इस तरह प्रजापति की

सृष्टि अपूर्ण रही । अंधकार नष्ट नहीं हुआ, और भी अधिक गहन हुआ है । मन्वंतर की समाप्ति और प्रजापति के अंधकार में विलीन होना इस एकांकी ववव की चरमसीमा है । चरमसीमा के साथ एकांकी समाप्त होती है।

इस प्रकार निर्माण कालीन चौथी स्थिति में डा. रामकुमार वर्मा की प्रवृत्ति गहन मनोवैज्ञानिक तथ्यों के प्रकट करने मे प्रवृत्त हुई और उन्होंने अनेक सफल मनोवैज्ञानिक अध्ययन से पूर्ण एकांकियों की रचना की है। जैसे पहले ही कहा जा चुका है, निर्माणकालीन चार स्थितियों में अन्य विशेषताएं भी दृष्टिगोचर होती है। संघर्ष अथवा द्वन्द्व की प्रमुखता मनोरंजक घटनाओं की कौतूहलपूर्ण अभिव्यक्ति ,विविध कोणों से जीवन की विभिन्न परिस्थितियों का आकलन कर उन को नाटकीय परिधान में व्यजित करने का प्रयास मनोवैज्ञानिक गहराइयों मे आमग्न पहुंचकर जीवन के वास्तविक मूल्यों को आदर्शपूर्ण परिसमाप्ति तक ले जाने की प्रवृत्ति - निर्माण काल की स्फुट रेखाएं हैं जिन से डा . वर्मा के एकांकीकार का स्वरूप निश्चित हुआ है । इस के पश्चात् उन रेखाओं से निर्मित स्केच में आकर्षक रंगों की पूर्ति विकास काल में हुई है । एकांकीकार के स्केच में एक ओर रंगों की अभिव्यक्ति हुई है तो दूसरी ओर स्केच का रूप उन रंगों के कारण निखर उठा है । विकास की दृष्टि से इस द्वितीय चरण को विस्तार काल नाम की संज्ञा दे सकते हैं । द्वितीय चरण का प्रारंभ सन् १६४३ से प्रारंभ होता है। सन् १६४३ के पश्चात् नाट्य शिल्प के निखार और विस्तार की स्फुट रेखाएं सब क्षेत्रों में मिलती है । समाज, राजनीति, दर्शन, इतिहास, धर्म, राष्ट्रीयता, परिवार -- सभी क्षेत्रों से कथावस्तु का चयन किया गया है । निर्माण कालीन दूसरी स्थिति तथा तीसरी स्थिति में जीवन की विविध परिस्थितियों का आकलन कर मनोरंजक घटनाओं को नाटकीय रूप देने की जो प्रवृत्ति दिखाई पड़ी है, वही प्रवृत्ति विकसित होकर सब क्षेत्रों में अपनी व्यापकता व्यापकता दृष्टिकोण के साथ कलात्मक विन्यास का विस्तार दिखाई पड़ता है । विस्तार काल में विभूति, सप्तकिरण, रूप रंग, रजत रश्मि ऋतुराज, दीपदान, रिमझिम, कौमुदी महोत्सव, ध्रुवतारिका, रम्यरास, बापू, इन्द्र धनुष्य, सत्य का स्वप्न, शिवाजी पांचजन्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं । एक नया संग्रह मयूर पंख शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है ।

हम यहाँ विषय वस्तु के दृष्टिकोण से विस्तार काल की कृतियों को विभाजित कर उनका मूल्यांकन करना चाहते हैं । द्वितीय चरण के एकांकियों को दो वर्गों में रख सकते हैं । १. सामाजिक २. ऐतिहासिक द्वितीय अध्याय में हम ने इस वर्गीकरण के आ विषय पर चर्चा की है । डा. वर्मा ने इस विस्तार काल में भले ही अनेक विषयों पर अपनी लेखनी चलायी हो, लेकिन वे सब विषय या तो सामाजिक वर्ग के अंतर्गत आते हैं या ऐतिहासिक । हाँ, शिल्प की दृष्टि से डा. वर्मा ने इस काल में दो प्रकार की रचनाओं का प्रणयन किया है । इस काल तक आते आते रेडियो भी एकांकी नाटकों के श्रव्य प्रस्तुतीकरण का साधन बन गया है । केवल रंगमंच को दृष्टि में रखकर रचित एकांकियों को रेडियो द्वारा प्रसारित करने में कठिनाई होने लगी । रंगमंचीय एकांकियों में आवश्यक परिवर्तन कर वे रेडियो द्वारा प्रसारित किये गये हैं । लेकिन प्रस्तुतीकरण के साधनों की भिन्नता के कारण शिल्प-विन्यास में भी भिन्नता है । इसी कारण से डा. वर्मा ने ऐसे एकांकियों का प्रणयन भी किया है जिस के लिए उन्होंने केवल रेडियो शिल्प को दृष्टि में रखा है । अत : इस काल में शिल्पगत भिन्नता के कारण डा. वर्मा के एकांकी दो प्रकार के बने हैं ।१. रंगमंचीय एकांकी २. रेडियो एकांकी

इस वर्गीकरण के आधार पर विकास काल में निर्मित एकांकियों के शिल्प की विशेषताओं का अध्ययन किया जा सकता है । इन प्रकारों का विवेचन अभिनय तत्व तथा रंगमंच के आधार पर करना अपेक्षित है । यहाँ केवल वस्तु विविधता के आधार पर विभाजित दो वर्गों में अर्थात सामाजिक तथा ऐतिहासिक एकांकियों की शिल्प संबधी विशिष्टताओं का विवेचन प्रस्तुत करेंगे ।

सामाजिक समस्याओं पर डा. वर्मा ने अनेक एकांकियों की रचना की है । उन की कला जीवन के यथार्थ से उद्भूत होकर सजीव आदर्श की सृष्टि करने में प्रगतिशील रही है । उन्होंने अपनी नाट्य-कला के प्रयोग के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है ----- " मेरी कला जीवन के यथार्थ से उद्भूत होकर सजीव आदर्श की सृष्टि करने में प्रगतिशील रही है । यों तो जीवन ही एक विशाल नाटक है और यदि हम कुछ शताब्दियों तक जीवित रहे, तो उस विशाल नाटक की चरमसीमा को देखने में समर्थ हो सकेंगे । किन्तु न तो लेखक और न दर्शक या पाठक शताब्दियों की क्या, एक शताब्दि के उत्तरार्ध तक जीवित रहने का विश्वास कर सकते हैं, यद्यपि उन के दीर्घ जीवन की मेरी बलवती मंगल कामनाएं हैं ।

तब इस जीवन नाटक की अनुभूति तब तक नहीं हो सकती जब तक अपनी अन्तर्दृष्टि या अनुभव से कुछ ऐसी घटनाओं की सृष्टि न कर दें, जो उस क्रम को निश्चित निष्कर्ष की ओर गतिशील कर सकें। जीवन के स्वाभाविक गतिप्रवाह को कुछ बल देना अथवा उस की दिशा में झुकाव ला देना ही मेरी नाटक - रचना का प्रमुख उद्देश्य रहा है। अपनी इस कला का प्रयोग मैं सामाजिक नाटकों में विश्वास के साथ कर सका हूं।' इस प्रकार जीवन के स्वाभाविक गति प्रवाह को बल देना और उस के लिए आदर्श प्रस्तुत करना अथवा उस की दिशा में नया झुकाव ला देना उन के सामाजिक एकांकी रचना का प्रमुख उद्देश्य है। " अठारह जुलाई की शाम " " आंखों का आकाश " " आशीर्वाद, " " इलैक्शन, " " उत्सर्ग, " " एक तोले, अफ़िम की कीमत, " " एक्ट्रैस, " " कलाकार का सत्य, " " कहां से कहां, " " चम्पक " " दस मिनट, " 'नमस्कार ' " की बातें, " " नहीं का - रहस्य, " " परीक्षा " " पुरस्कार, " " प्रेम की आंखें " " फ़ैमिली पार्टी, " " बादल की मृत्यु, " " मर्यादा की वेदी पर, " " रंगीन स्वप्न, " " रजनी की रात " " रूप की बीमारी, " " रात का रहस्य, " " रेशमी टाई, " " " वह वीर था, " " सही - रास्ता, " आदि एकांकी प्रतिनिधि रचनाओं के रूप में लिये जा सकते हैं।

काल्पनिक जगत से गृहीत कथावस्तु इन एकांकियों में प्रस्तुत नहीं की गई है। दैनिक जीवन में नित्य प्रवाहित घटनाओं के प्रवाह से विषय का चयन किया गया है। (०) उन के नाटकों की आधार-शिला जीवन की वास्तविकता है। लेकिन प्रगतिशील लेखकों की भांति जीवन की कुरूपता का चित्रण करना उन का अभीष्ट नहीं, अर्थात् कट अतिवास्तविकता का चौत्र उन्हें अरुचिकर है। स्वाभाविकता का पोषण उस हद तक वांछनीय है जहां तक उस से अभ्युदय की संभावना रहती है। अति यथार्थ के कुत्सित चित्रांकन से न समाज का कल्याण होता न उस की गति का मार्ग निर्देशित होता। (१)

---

(०) हमारे जीवन के चारों ओर घटनाओं का अविराम प्रवाह बहता रहता है, जिस में प्राणों के तत्वों का अत्यन्त रहस्यमय संकेत होता है। आवश्यकता इस बात की है कि इन घटनाओं को सजीव दृष्टि से देखकर उन की व्यंजना में कथावस्तु का निर्माण कर लिया जाय -- रेशमी टाई -- पृ ६

एम० ए०, पी-एच० डी० डा. रामकुमार वर्मा.

(१) हमारे प्रगतिशील लेखक अश्लीलता के किनारे बैठकर साहित्य के नाम पर अपनी वासनाओं का नृत्य देखना चाहते हैं। डा. रामकुमार वर्मा -- रेशमीटाई पृ. १२

अत: डा. वर्मा ने कथावस्तु का चयन जीवन के अनेक क्षेत्रों से करते हुए भी मनुष्य के मन और मस्तिष्क के सर्वकालीन तथा विश्वजनीन द्वन्द्वों जैसे प्रेम, कर्तव्य, त्याग, वासना, ईर्ष्या, द्वेष, ग्लानि आदि का अंकन करते हैं। (२)

सामाजिक एकांकियों का निर्माण विभिन्न क्षेत्रों से गृहीत कथावस्तु से किया गया है। समाज के अंग परिवार, राजनीति, साहित्य, धर्म आदि में से विषय वस्तु का चयन हुआ है। मोटे तौर पर सामाजिक एकांकियों को दो भागों में विभाजित कर सकते है। १ परिवार २. व्यक्ति। वर्माजी के ऐसे एकांकी भी है जिन में व्यक्ति, परिवार तथा समाज तीनों आ सकते हैं। इन एकांकियों का छवि परिवेश बड़ा है।

पारिवारिक एकांकियों मे कहीं नव विवाहित दम्पतियों की मानसिक स्थिति का विश्लेषण हुआ है तो कहीं सास बहू के कलह का वृतान्त अंकित किया गया है। मुख्यत: इन एकांकियों में मध्यवर्ग के पारिवारिक जीवन के चित्र ही रचे गये हैं। " कहां से कहां " " छोटी सी बात " " प्रेम की आंखें " , "आशीर्वाद", "रजनी की रात", "आंसो का आकाश", "फैलट हैट", "पृथ्वी का स्वर्ग", "रेशमी टाई", "१८ जुलाई की शाम" आदि एकांकी उल्लेखनीय हैं।

" कहां सेकहां " में सास- बहू के कलह का चित्रण है जिस में सास के चरित्र पर अधिक प्रकाश पड़ता है। यह निर्विवाद विषय है कि दो पीढ़ियों के व्यक्तियों के बीच में भाव साम्य या विचार साम्य का होना कठिन है। केवल प्रेम, ममता तथा आदर एवं गौरव के आधार पर दो या तीन पीढ़ियों के व्यक्ति एक परिवार में सुख और शान्ति से रह सकते है। सास और बहू के बीच में एक पीढ़ी का ही अंतर नहीं रहता, अपितु उस के साथ साथ सास के मन में बहू के संस्कारों तथा आधुनिक विचारों के प्रति विरोध भाव रहता है। अगर पुत्र अपनी माता और पत्नि दोनों के स्वभाव तथा उन की विचार पद्धतियों का अच्छा ज्ञान रखता है तो परिवार में संतुलन की स्थिति रहती है। नहीं तो नित्य प्रति कलह, विलाप और रोदन चलते रहते है। इस एकांकी में ऐसी सास, का चित्रण किया गया है जो हृदय से ममतामयी है पर बहू को सताने में अव्वल है। भवानी अपनी बहू पद्मा के हर एक काम की आलोचना करती है। वह यह सहन नहीं करती है कि बहू पद्मा काम-काज को संभालते हुए पुस्तकों को भी पढ़े। बहू पद्मा सीधी है, सास को अधिक मानती है और उस के विरुद्ध मुंह खोलती तक नहीं। लेकिन भवानी अपने पुत्र केसरी नन्दन से झूठी शिकायत करती है कि बहू ने झाड़ू से उसे मारा है।

चौबीसों घण्टे पुस्तक पकड़ी बैठती है और सारा दूध बिल्ली को पिला दिया है और उस की रेशमी बिलाउज को चूल्हे की आग में भस्म कर दिया। लेकिन पुत्र केसरीनन्दन अपनी माता के स्वभाव से परिचित है। दरवाजा बन्द कर पत्नी पद्मा को मारने का अभिनय मात्र करता है जिस में पद्मा भी रोने चिल्लाने का अभिनय कर सहायक होती है। बाहर भवानी की जान निकल जाती है। वह अपनी गलती का अनुभव कर, पुत्र को समझाने का प्रयत्न करती है। लेकिन पुत्र उस की नहीं सुनता। तो वह अपने स्वर्गवासी पति की सौगन्ध खाती है। बहू की सेवा करने के लिए वह आतुरता से अन्दर आती है और पुत्र को डांटती है कि " अब तू ने कभी बहू पर हाथ लगाया तो घर से निकल जाऊंगी। "खूंख्वार" कहीं का ! ऐसा पीटा जाता है ? दुनिया के लोग अपनी अपनी औरतों को पीटते है मगर तेरे जैसा कोई नहीं पीटता। पद्मा का फूल का बदन कुम्हला गया। अब कसम खा कि आइंदा बहू को नहीं पीटेगा। मेरी बेचारी बहू ! हाय ! मेरी बेचारी बहू !" भवानी स्वयं कसम खाती है कि कभी वह बहू की शिकायत नहीं करेगी। उस को मालूम होता है कि साधारण बात भी कहां से कहां पहुंचती है। इस में सास के हृदयगत भावों का अंकन अत्यन्त सुन्दर ढंग से हुआ है। उस का चरित्र स्फटिक की भांति साफ है। उस में तीखेपन की मात्रा जितनी अधिक है उतनी ही प्रीति की मात्रा भी है। उस के क्रोध का पारा कितना शीघ्र चढ़ जाता है --" अच्छा, अब मेरी बात भी काटेगी ? मेरी इतनी उमर बीत गई। मेरी बात केसरी के पिता तक ने नहीं काटी और वह कल की छोकरी की यह मजाल है कि मेरी बात काटकर चली जाय ? देखो, आज तुम्हारी कौन गति कराती हूं। आने दो केसरी को। सिर पर चढ़ गई है ! केसरी के पिता तक मेरा गुस्सा सह जाते थे। आज मेरे ये दिन आ गये कि -------- " लेकिन अन्त में उसी बहू के प्रति उस की प्रीति व्यंजित होती है।

इस व्यंग्य प्रधान एकांकी में चरित्र चित्रण के सुन्दर अंकन से अधिक प्रेषणीयता आ गई है। केसरी नन्दन को हम उस समय तक नहीं समझ सकते जब तक वह पत्नी पद्मा के कान में मार खाने का अभिनय मात्र करने का अनुरोध करता है। तब तक हम समझते हैं कि उस की माता की ही भांति वह भी क्रोधी है और गऊ जैसी अपनी सुशील पत्नी को समझाने में गलती कर रहा है। कथा वस्तु की गति मे इस तरह की मोड़ जहां आती है वहां दर्शक अधिक प्रभावित होते हैं।

---

(२) मेरे नाटकों की भूमिका तो उन हृदयों ये है जिन मे सौन्दर्य और प्रेम के नीचे जीवन का प्रवाह होता रहता है। इस प्रवाह की लहरों में मेरे हृदय के चित्र प्रतिबिम्बित हैं। सही रास्ता पृ. १ डा. रामकुमार वर्मा।

व्यंग्य को ध्वांजित करने में भी यह मोड़ सहायक हुआ है । शक्तिशाली कथोपकथनों के द्वारा आवश्यक प्रभाव की सृष्टि की गई है । कथावस्तु यथार्थ जीवन से संबन्धित है पर उस का विन्यास और अंतिम परिणाम की कल्पना आशावादी सुधार भावना में हुई है ।

" छोटी सी बात " एकांकी की कथा वस्तु एक छोटी सी बात के आधार पर निर्मित हुई है । " संसार की महान घटनाएं छोटी सी बात से प्रारंभ होती हैं । " पति-पत्नी राकेश और उमा का वार्तालाप इसी चर्चा से प्रारंभ होता है । विनोद और हास्य की उक्तियों के बीच में उमा को राकेश की एक छोटी सी उक्ति कटु लगती है । वह उक्ति यह है कि राकेश ने अपने मित्र मदन की पत्नी कमला देवी के साथ चाय पी ली है । इस पर उमा के मन में संदेह उत्पन्न होता है । इस छोटी सी बात को लेकर वह व्याकुल होती है । क्रोध करती है । लेकिन अंत में कमलादेवी के पत्र के द्वारा यह मालूम होता है कि कमला देवी भाई राकेश के हाथ रक्षा बन्धन से बाँध देगी । उमा का संदेह दूर हो गया और एकांकी की समाप्ति उल्लासमय वातावरण में होती है । इस प्रकार छोटी सी बात से राकेश की गृहस्थी के उजड़ने तक की संभावना आ गई और पुनः पत्र रूपी छोटी-सी बात से गृहस्थी बस गई है ।

यह तो सत्य है कि ऐसी छोटी सी बातों से बड़े भयानक परिणाम निकलते हैं । मनुष्य को इन बातों की गुरुता पर विचार करना चाहिए । लेकिन परिस्थिति की तीव्रता में मनुष्य अपने मानसिक संतुलन को खोकर विचार करने में असमर्थ होता है । इस एकांकी में वैसे तो कोई विशेष बात नहीं है पर यह विशेष बात की ओर संकेत तो अवश्य करता है । वैवाहिक जीवन में पति-पत्नी के बीच में ऐसी छोटी सी बातों के विषय में संदेह, शक आदि का उत्पन्न होना सर्व साधारण है । विवेकी लोग इन छोटी बातों से उत्पन्न प्रलयों का निवारण कर सकते हैं तो अविवेकी लोग प्रलय में नष्ट हो जाते हैं । डा. वर्मा ने वक्रोक्ति के द्वारा इसी ओर संकेत किया है ।

" प्रेम की आँखें " एकांकी पति - पत्नी के बीच की अवगति (understanding) के आधार पर रचा गया है । वैवाहिक जीवन में स्वर्गिक आनंद की उपलब्धि तभी होती है जब पति-पत्नी में आपसी बोध हो । वे एक दूसरे के भावों तथा विचारों का ध्यान रखें । यह पारस्परिक बोध (mutual - understanding) प्रेम की गहनता के आधार पर उत्पन्न होता है । चाहे समाज के निम्न स्तर के दम्पति ही क्यों न हों, यदि इन में पारस्परिक बोध हो तो उन का जीवन, साधारण अभावों से ग्रस्त रहने पर भी आनंददायक होता है ।

प्रेम भरी आंखों से देखने पर जीवन की कटुता भी मधुर लगती है । पत्नी जिन्दगी की वह नियामत है जो जिन्दगी की राहों के कांटों को भी छूकर फूल बना देती है । गृहिणी की इन्हीं प्रेम भरी आंखों पर एकांकी रचा गया है और यह सिद्ध किया गया है कि ग्रामीण स्त्रियों में अभी वह प्रेम की ज्योति प्रकाशित है जिस से पुरुष के जीवन का अन्धकार दूर हो जाता है । पर सभ्य, शिक्षित कहलानेवाली नागरिक स्त्रियों की आंखों में प्रेम के अंजन के स्थान पर केवल सुरमा ही है जिस से पुरुष का जीवन अंधकारमय तथा दुःखमाजक है ।

नगर के प्रतिष्ठित वकील मदन-मोहनका विवाह धन संपन्न परिवार की लड़की रेखा से हुआ है । अपनेपति के कार्यों में सहयोग देती हुई, गृहस्थी का भार संभालने की कर्तव्य-भावना रेखा में नहीं के बराबर है । वह अपने पति की आमदनी का ध्यान किये बिना कपड़ों तथा विलासी वस्तुओं के लिए धन का व्यय करती है । इस पर पति-पत्नी के बीच झगड़ा होता है और बात यहां तक पहुंचती है कि रेखा अपने मायके चले जाने का निर्णय कर लेती है । ठीक उसीसमय पर वैजनाथ नामक एक ग्रामीण मुवक्किल आता है । पिता के मरने पर उसका शराबी भाई सारी जायदाद पर अपना अधिकार स्थापित कर लेता है । वैजनाथ का परिवार भूखों मर रहा है । उस की पत्नी, मंगलिया कीमां, उसे मजूरी करते हुए देख नहीं सकती । वह कहती है कि गहनों के होते हुए तुम्हें मजूरी करते हुए नहीं देखूंगी । इन्हें ले जाकर वकील साब की फीस दो और मुकदमा लड़ो । मंगलिया कीमां के पति-प्रेम की प्रशंसा मन में करते हुए वकील मदन मोहन मुकदमा लेता है और फीस लेना नहीं चाहता । उसकी पत्नी रेखा की आंखें खुलती हैं और वह मंगलिया है । उस के इस परिवर्तन के साथ एकांकी की समाप्ति होती है । इस प्रकार इस एकांकी में वैवाहिक जीवन के वास्तविक बन्धन, प्रेम के सूत्र, का महत्व व्यंजित हुआ है ।

" आशीर्वाद " एकांकी में मध्य वर्ग के दम्पति की आशा-निराशाओं का अंकन हुआ है । मध्य वर्ग के लोगों की यह कामना होती है कि वे भी उच्चवर्ग के लोगों की भांति रहें। लेकिन आर्थिक स्थिति उन्हें उस स्तर तक पहुंचने नहीं देती । वे लोग उन सभी साधनों को ग्रहण करते हैं जिन से उन्हें मुफ्त में अधिक धन मिले । क्रासवर्ड पजिल, लाटरी आदि में पैसे खर्च करने की उन की मनोवृत्ति को लेकर डा. वर्मा ने इस एकांकी की रचना की है । राजेश कुमार लाटरी का टिकट इस आशा से खरीदता है कि उस को पहला नहीं तो कम से कम एक न एक इनाम मिल जायेगा । निर्णीत तारीख के दिन उस की उत्सुकता इतनी बढ़ जाती है कि वह दफ्तर भी जा नहीं पाता ।

तार की प्रतीक्षा में उस को एक एक घड़ी भारी मालूम पड़ता है । उस की पत्नी सरोज भी आशा बांधकर रहती है और उस ने भगवान की मनौती भी मान रक्खी है । पति-पत्नी तार की प्रतीक्षा करते हुए इनाम में मिलनेवाले लाखों रुपयों को खर्च करने की पद्धति को सोचते हैं। अंत में तार की जगह लाटरीवालों से एक पत्र आता है जिस में यह निवेदन किया जाता है कि आप की अनुमति लेकर टिकेट का रुपया पंजाब के साम्प्रदायिक आग में झुलसनेवाले शरणार्थियों की रक्षा में लगा देंगे । राजेश और सरोज निश्चय कर लेते हैं कि उन के टिकट का रुपया रक्षा कार्य में लगा दिया जाय । इस तरह इस दम्पति को पांच लाख रुपयों की जगह पूरे पांच लाख आशीर्वाद मिलते है । इस एकांकी में मध्यवर्ग के दम्पति की मनोवृत्ति पर प्रकाश डाला गया है । राजेश और सरोज का आशा- निराशा की डोलिका में उत्सुकता से युक्त होकर डोलना कितना ही स्वाभाविक है । " टास " के द्वारा फल निकालने का प्रयत्न, दर्शकों को भले ही मनोरंजक और हास्यपूर्ण दिखाई पड़े, पर उस स्थिति में वह कृत्य अत्यन्त स्वाभाविक है । डा. वर्मा ने एक तार की भी इस में कल्पना की है जो राजेश के मित्र मि. मुखर्जीलाल के ट्रान्सफ़र की सूचना देता है । इस तार को लेने में और उसको पढ़ने में राजेश का मानसिक आवेग बढ़ जाता है । जब वह लाटरी का न निकाला तो उस के क्रोध और कोप की सीमा नहीं रहती । मध्य वर्ग के लोगों में सार्वजनिक सेवा कार्यों के लिए पैसे देने की प्रवृत्ति भी देखी जाती है । अपनी शक्ति के अनुसार हाथ बंटाने में वे पीछे नहीं हटता । एवं० राजेश और सरोज में यही प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है । वे चाहे तो लाटरी के टिकट का रुपया वापस ले सकते हैं, लेकिन वे नहीं लेते । राजेश और सरोज मध्य वर्ग के दम्पति का प्रतिनिधित्व सच्चे अर्थों में करते हैं ।

इस प्रकार के पारिवारिक जीवन से संबन्धित कितने ही कथानकों को लेकर डा. वर्मा ने एकांकियों की रचना की है । राजनीति तथा देश भक्ति से संबन्धित एकांकी भी रचे गये है । उन में भी नैतिक आदर्श की प्रतिष्ठा की गई है । " पुरस्कार " एकांकी उल्लेखनीय है । देश के स्वतंत्रता-संग्राम का सिपाही प्रकाश राजनीति के अपराध से कैदी बनता है । लेकिन वह किसी अद्भुत तरह कैद से फरार होता है । सरकार यह घोषणा करती है कि उसे पकड़ने पर एक हजार रुपयों का इनाम दिया जाता है । पुलिस इन्सपेक्टर राजबहादुर प्रकाश के लिए जान देकर तलाश करता है । उस की दूसरी पत्नी नलिनी, जो विवाह के पूर्व प्रकाश की प्रेमिका थी, प्रकाश को अपने घर में थोड़ी देर के लिए आश्रय देती है । नलिनी प्रकाश की वीरता, देशभक्ति के प्रति अत्यन्त श्रद्धालु है ।

उन दिनों के बीच पत्र व्यवहार भी चलता रहता है और स्नेह के कारण प्रकाश की सहायता करने के लिए नलिनी हमेशा संसिद्ध रहती है । प्रकाश और नलिनी के बीच बातें हो रही थीं कि इतने में नलिनी का पति राजबहादुर आ जाता है । शीघ्रता से प्रकाश भाग तो न जाता है लेकिन प्रकाश की नकली दाढ़ी और मूंछ नहीं रह जाती हैं । राजबहादुर के संदेह के लिए वे पर्याप्त हैं । नलिनी बात टालने के लिए अनेक बातें बना बनाकर करती हैं लेकिन अंत में प्रकाश का प्रेम-पत्र भी राजबहादुर के हाथ में पड़ जाता है । नलिनी पुनः झूठा नाटक खेलती है और बता देती है कि केवल पति की सहायता करने के लिए उस ने झूठे प्रेम का पत्र-व्यवहार किया जिस से प्रकाश का पता पा सके । अब पति नलिनी की प्रशंसा करने लगते हैं तो मौका पाकर पति के रिवालवर लेती है और वह उस के प्राण लेने को तैयार होती है । इतने में प्रकाश आकर पुलिस इन्सपेक्टर को बुलाता है और अपने को स्वयं उस के हाथ सौंप देता है । पुलिस इन्सपेक्टर की आँखें प्रकाश की इन बातों से खुल जाती है । ---- " मैं अपने ही भाई को मारकर अपना देश आजाद नहीं कर सकता । " पुलिस इन्सपेक्टर राजबहादुर विदेशी सरकार की नौकरी छोड़कर देश भक्त बन जाता है । वह नलिनी का विवाह प्रकाश से करना चाहता है पर प्रकाश सच्चे अर्थों में देश भक्त और समाज सेवक है । वह कहता --- है " देशभक्त बलिवेदी से विवाह करता है, स्त्री से नहीं । स्त्री तो उस की शक्ति है, दुर्गा है । " इस एकांकी की कथावस्तु तो राजनीतिक है लेकिन इस में स्त्री -- पुरुष के कोमल और कठोर भावों पर प्रकाश डाला गया है । एकांकी के प्रारंभ में भूमिका की भांति नाटक का नियोजक श्याम नारायण नाटक में प्रतिपादित मुख्य वस्तु पर विचार इस प्रकार करता है ----- " पुरुष इसलिए कठोर है कि वह बाहरी शक्ति से स्त्री की कोमलता की रक्षा कर सके और स्त्री इसलिए कोमल है कि वह कठोर पुरुष को पत्थर न बन जाने दे, वरन् उस में हृदय के स्पन्दन की संभावना उत्पन्न कर सके । लेकिन कभी पुरुष को स्त्री के समान कोमल बनना पड़ता है तो कभी स्त्री को पुरुष के समान कठोर बनना पड़ता है । इसी के आधार पर एकांकी के पात्रों नलिनी, राजबहादुर और प्रकाश का अंकन किया गया है । एकांकी के अंत में पुनः नियोजक आकर उन की आलोचना इस प्रकार प्रस्तुत करता है ---- " नलिनी कोमल होकर भी कठोर है । राजबहादुर कठोर हो कर भी कोमल है । प्रकाश कोमल तथा कठोर दोनों ही है । " प्रेम के क्षेत्र में हृदय की कोमलता तथा कठोरता दोनों की स्थिति परिस्थिति की तीव्रता की मात्रा के आधार पर बनती है । सन्तुलित मन में इन दोनों तत्व का समान अस्तित्व रहता है ।

अन्य एकांकियों की भाँति इस एकांकी में भी पुलिस इन्सपेक्टर राजबहादुर के हृदय परिवर्तन का अंकन किया गया है। आदर्श की स्थापना करना डा. वर्मा की कला का मुख्य अंग है। प्राय: सब एकांकियों में कथावस्तु के अंत में पात्र के चरित्र का दिशा-- अर्थ परिवर्तन अंकित किया गया है।

डा. वर्मा ने साहित्यिक एकांकियों का प्रणयन भी किया है। साहित्यिक क्षेत्र के साधक, प्रतिभाशाली लेखकों को जीवन में अधिक से अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। आर्थिक दृष्टिकोण से उन की दशा गिरी रहती है। अगर उन्हें यश तथा गौरव की प्राप्ति हो जाय तो कुछ न कुछ सान्त्वना मिलती है। लेकिन उन के भाग्य में न धन की प्राप्ति है न यश की। डा. वर्मा के " कलाकार का सत्य " एकांकी में ऐसे ही कवि के मानसिक क्षोभ का चित्रण है जिस की साहित्य साधना का मूल्यांकन न अर्थ की दृष्टि से की गई है न यश की दृष्टि से। उस कवि को स्वप्न में तुलसीदास के दर्शन होते हैं। महाकवि तुलसीदास उस को समझाते हैं कि " स्वान्त : सुखाय, निरपेक्ष भाव से साहित्य की साधना करने पर मानसिक व्यथा उत्पन्न नहीं होती। निस्पृह साधना के आदर्श का अब ज्ञान होने पर कवि अखिल को सान्त्वना मिलती है। इस एकांकी में एक ओर कवि लोगों को व्यक्तिगत साहित्यिक साधना की निस्पृहता का संन्देश दिया गया है तो दूसरी ओर परोक्ष ढंग से समाज के लोगों को यह सुझाया गया है कि महाकवि की साधना के प्रति श्रद्धा युक्त होवे।

" प्रसाद की कला " एकांकी में महाकवि प्रसाद के गौरव का प्रतिपादन किया गया है। विकास क्रम के अनुसार प्रसाद के नाटकों के संवाद के प्रसंगों की झांकियां पस्तुत की गई हैं। " घर और बाहर " एकांकी भी साहित्यिक दृष्टि से लिखा गया है। इस में पतंग नामक कवि का व्यंग्य चित्र प्रस्तुत किया गया है जिसे वास्तव में कविता करना नहीं आता। इधर उधर की बातों को पद्य रूप में गा कर, वाह वाह लूटना उसका उद्देश्य है। आज ऐसे कवियों की संख्या कम नहीं है, जो केवल अर्थ-लालसा, और प्रशंसा के इच्छुक होते हैं। उन में कवि होने की क्षमता ढूंढने पर भी नहीं मिलती।

" ऋतुराज स्वागत है " में जयदेव, विद्यापति, सूरदास, मीरा, सेनापति, देव, पद्माकर, हरिश्चन्द्र, रत्नाकर, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत और महादेवी वर्मा की वसंत ऋतु संबंधी कविताओं को क्रम बद्ध रूप से प्रस्तुत किया गया है। ऋतुराज वसंत के स्वागत में हिन्दी के कवियों की वाणी से जो जय-गान निकले उन्हीं को एकांकी का रूप प्रदान किया गया है। साहित्यिक दृष्टि-

कौण से यह एकांकी भी दर्शनीय अथवा श्रवण करने योग्य है ।

डा. रामकुमार वर्मा यथार्थवादी लेखक हैं पर उन का यथार्थ " अति " की सीमा तक नहीं पहुंचता । वे किसी भी समस्या के प्रति पूर्ण रूप से तटस्थ होकर निरेखा भाव से देखते हैं । समस्या का अवलोकन वे जीवन में जिस प्रकार करते हैं उसी प्रकार उसका अंकन करते हैं । इसी कारण से इन के एकांकियों में किसी एक पक्ष का समर्थन नहीं मिलता और साथ ही साथ विवेचक निरेखा हास्य का प्रादुर्भाव भी इन के नाटकों में हुआ है । नाटक साहित्य में प्रहसनों का अमूल्य स्थान है । संस्कृत साहित्य के प्रहसनों की परंपरा आज भी नवीन ढंग से जीवित दिखलाई पड़ती है । डा. रामकुमार वर्मा ने भारतीय तथा पाश्चात्य हास्य सिद्धान्तों की व्याख्या करते हुए अपने प्रहसनों में सर्वांगीण समन्वयात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है । उन के अनुसार हास्य के भेद तथा उस के रूप इस प्रकार हैं*------

१. सहज हास्य के ----	i	विनोद	--- Wit
	ii	अट्टहास	--- Laughter
२. दृष्टि विकार से --	i	अतिरंजना	--- Caricature
	ii	विद्रूप	--- Contrast
३. भाव विकार से --	i	परिहास	--- Parody
	ii	उपहास	--- Comic
४. ध्वनि विकार से --	i	व्याजोक्ति	--- Sarcasm
	ii	वक्रोक्ति	--- Tendency Wit
५. बुद्धि विकार से -	i	व्यंग्य	--- Irony
	ii	विकृति	--- Satire

सहज हास्य के दो रूप हैं विनोद और अट्टहास । इन में केवल हास्य की निरीह और निर्दोष भावनाएं हैं जो हृदय को चिन्ता से मुक्त कर प्रसन्नता का वरदान देती हैं । विनोद तो एक बुलबले की भांति भावलहरों पर तैरकर फूट पड़ता है । और अट्टहास बढ़ती हुई लहर की भांति जीवन के दोनों तटों को अपनी बाहु में समेट लेना चाहता है । डा. वर्मा के " पृथ्वी का स्वर्ग " और " रंगीन स्वप्न " में विनोद मिलता है । " फ़ैलट हैट " और " रूप की बीमारी " में " अट्टहास " की सृष्टि की गई है ।

---

* डा. रामकुमार वर्मा — रिमझिम की भूमिका . पृ. ११.

" रंगीन स्वप्न " और " रूप की बीमारी " के इतिवृत्त आजकल के नवयुवकों में पायी जानेवाली एक विचित्र रंजना पर आधारित है। प्रेम और अनुराग व्यक्तिगत आकांक्षाओं में हो कर चलता है और यदि अनुराग नवयुवक और नवयुवती के चरम छोरों को समीप लाने में समर्थ हो सका तो उस में एक मादक कुतूहलता निवास करने लगती है और कथानक के निर्माण में यही प्रमुख संवेदना बन गई है। " रंगीन स्वप्न " सहज हास्य के प्रथम पार्श्व विनोद का निर्माण करता है तो " रूप की बीमारी " द्वितीय पार्श्व अट्टहास का सृजन करता है।

" रंगीन स्वप्न " एकांकी का इतिवृत्त इस प्रकार है ------- कमल नामक युवक अपने रंगीन स्वप्नों में खोकर अपनी आराध्य देवता प्रभा से मिलने की इच्छा से विक्टोरिया पार्क में आता है। वह अपने मन की सुनहली तथा मादक इच्छाओं को गोपनीय रखना तो चाहता है पर प्रेम की मादकता छिपाये न छिपती। उस की प्रतीक्षा में विघ्न के रूप में उसका साथी नन्दन वहीं पर आता है। कमल उसे विदा देने का व्यर्थ प्रयत्न करता है और उस के इस प्रयत्न से नन्दन को कमल का असली रहस्य ज्ञात हो जाता है। इन दोनों के वार्तालाप में चोरी शब्द का प्रयोग दो तीन बार होता है पुलिसमैन को उन पर सन्देह होता है। पुलिसमैन उन दोनों को बुरी तरह से डांटता है ----- " ऐ मिस्टर। ये चोरी की बातें क्या कर रहे हो ? क्या किसी का जेब काटने की फ़िक्र में हो ? ये पार्क है। " पुलिसमैन के इस तरह का प्रवेश काफ़ी विनोद की सृष्टि करता है। इस एकांकी का यह प्रसंग शेक्स्पियर के सुखान्त नाटक " मच एडो एबाउट नथिंग " (Much Ado About Nothing) के वाचमैन डागबेरी (Dogberry) वाले प्रसंग से साम्य रखता है। शेक्स्पियर ने अपने नाटक में विनोद की सृष्टि करने के उद्देश्य से कथा वस्तु के अंतिम फल निर्धारण के सहायक रूप में डागबेरी वाले प्रसंग की कल्पना की है। उस में भी डागबेरी और उस के साथी " चोरी " आदि शब्दों को वार्तालाप में सुनकर गलत ढंग से समझ लेते हैं और उन व्यक्तियों को पकड़ लेते हैं। उस प्रसंग में काफ़ी विनोद मिलता है। उसी भांति कमल और नन्दन को पुलिसमैन की डांट सहनी पड़ती है। उस के पश्चात् संयोगवश कमल को एक हरा रूमाल मिलता है जो उस की प्रेमिका प्रभा का है। कमल को यह नहीं मालूम कि प्रभा के मन में उस के प्रति प्रेम है कि नहीं। वह उस से पूछने यहां आया है कि यह उस के रंगीन स्वप्न हैं या रंगीन सत्य ? हरे रूमाल की प्राप्ति ने उस के मन में आशा को जागृत किया है।

अपने मित्र से उसी संबद्ध में बात कर रहा था कि पुनः पुलिस मैन का आगमन होता है जो हरे रूमाल की ही खोज कर रहा है । छिपाने की कोशिश करने पर भी कमल पकड़ा जाता है । पुलिसमैन यह भी दावा करता है कि उस हरे रूमाल में छह पांच रूपये का नोट भी है और वह एक बुढ़िया का है । चरमसीमा की स्थिति में जब पुलिस मैन कमल को थाने में ले जाना-चाहता है तब प्रभा आती है और रूमाल को अपना प्रमाणित कर ले लेती है । प्रभा यह भी स्पष्ट करती है कि रूमाल उस केहाथ से गिर गया था । न वह गिराया गया और न चुराया गया । यहां किसी बात का कोई मतलब नहीं निकलता । हवा में उड़ने की कोशिश न करना । कमल के रंगीन स्वप्न सत्य नहीं हुआ ।

इस तरह इस एकांकी में प्रसंगोचित विनोद की कल्पना भी की गई है और साथ ही साथ नवयुवकों की विनोद से युक्त, कल्पनालोक की भावुकता-पूर्ण बातों से भी हास्य की सृष्टि की गई है । जीवन की सहज परिस्थितियों से विनोद की सृष्टि हुई है ।

" रूप की बीमारी " में सहज हास्य के अट्टहास का रूप मिलता है । जब यह एकांकी रंगमंच पर खेला गया तो उसकी अनेक परिस्थितियों में अट्टहास की ध्वनि गूंज उठी है । उस में रूप अपनी प्रेमिका से परिचय बढ़ाकर विवाह का प्रसंग छेड़ने के उद्देश्य से बीमारी का बहाना करता है । अपने धनवान पिता के मन को दुःख पहुंचाना भी नहीं चाहता । इसलिए डाक्टरों की सहायता से बीमारी की दवा संगीत बतलाता है और उस लड़की को घर पर बुलाने का प्रबन्ध करता है । इस में दोनों डाक्टरों की रोगसंबन्धी कनसलटेशन अट्टहास की सृष्टि करती है । एक डाक्टर बंगाली सज्जन है जिस की वाणी ही हास्य को उत्पन्न करने में समर्थ है । दोनों डाक्टर प्रसिद्ध हैं और बंगाली सज्जन तो लण्डन के एल. आर. सी. पी. भी हैं । जब तक इन दोनों को यह मालूम नहीं होता कि रूप को कोई बीमारी नहीं है केवल बहाना मात्र है तब तक उन की रोग संबन्धी धारणाएं बिलकुल निश्चित थीं । इतने प्रसिद्ध डाक्टर होते हुए भी वे पहचान नहीं पाते कि रूप को असल में कोई बीमारी नहीं है । दोनों एक दूसरे की सलाह लेकर अंत में यह निश्चित कर लेते है कि रूप का रोग " हैपेटिक कालिक " है और उसका इलाज आपरेशन के द्वारा ही किया जाता है । उन के इस निर्णय से रूप की बुरी दशा हो जाती है । कुछ समय तक वह असंदिग्ध अवस्था में पड़ जाता है और अंत में अपने रहस्य को डाक्टरों के सामने प्रकट करता है ।

नाटक पढ़ने या रंगमंच पर देखने पर विदित होता है कि उपर्युक्त दोनों परिस्थितियों में अट्टहास की मात्रा कितनी अधिक है । रूप के पिताजी सेठ रामेश्वरचन्द्र भोले हैं और पुत्र-वात्सल्य में उन्हें दूसरा कुछ सूझता नहीं । उन्हें अज्ञानी बनाकर डाक्टर भी रूप की सहायता करते हैं । इस नाटक के में सेठ के नौकरों के चरित्र के कारण भी जीवन की सजीवता आयी है । रंगमंच पर जीवन का स्वास्थ्य लाने में यह एकांकी सफल हुआ है ।

इसी भांति " पृथ्वी का स्वर्ग " एकांकी में विनोद की मात्रा है तो " फेलट हैट " में अट्टहास का पोषण हुआ है । " पृथ्वी का स्वर्ग " एकांकी में आधुनिक जीवन के एक परंपरावादी धन लोलुप व्यक्ति का चित्र इस प्रकार उपस्थित किया गया है जिस से सरल और निर्दोष मनोरंजन की सृष्टि हो सके और विनोद का उद्देश्य पूरा हो । " फेलट हैट " दो परंपराओं का संघर्ष है । आज का नवयुवक जीवन में उपयोगितावाद को सब से अधिक महत्व देता है । जब किसी नये हैट की उपयोगिता मूंगफली रखने में स्पष्ट होती है तो छोटी सी छोटी चीज़ को संवारकर रखनेवाली प्राचीन परंपरा से उसका संघर्ष होता है । इस संघर्ष की क्रमिक परिस्थितियों में अट्टहास का स्थान है । इस एकांकी में उसी संघर्ष का चित्रण हुआ है जिस से अट्टहास की सृष्टि हो सके । यह एकांकी अव्यवस्था के भी अनुकूल है अतः इस का प्रसार रेडियो पर अधिक बार हुआ और इस को काफ़ी प्रसिद्धि भी मिली है ।

दृष्टि विकार से दो प्रकार का हास्य उत्पन्न होता है । अतिरंजना और विद्रूप । अतिरंजना में वस्तु या परिस्थिति को अनुपात रहित घटा-बढ़ा देने में, जैसे कोई कार्टून बनानेवाला छोटे शरीर पर बड़ा भद्दा सिर बना दे या छोटे सिर में बड़े पैर जोड़ दे --- हास्य की सृष्टि होती है । विद्रूप में परिस्थितियों को उलट देने में , जैसे उलटबासियों में, हास्य की उत्पत्ति होती है । किसी भी व्यक्ति में किसी गुण की अनुचित अतिरेकता भी हास्योत्पादक होती है ।

डा. रामकुमार वर्मा के " कवि पतंग " में अतिरंजना का और " नमस्कार की बात " और " एक तोले अफ़ीम की क़ीमत " में विद्रूप का समावेश हुआ है । " कवि पतंग " में कवि में स्त्री सुलभ सुकुमारता नेकवि के हृदय में अपना नीड़ बना लिया है । उस की भावुकता चरमसीमा को भी पार कर गई है । अतः उस का चित्र अतिरंजना का परिचय देते हुए हंसाता है । परिस्थितियों के उलट जानेपर विद्रूप की सृष्टि होती है । " नमस्कार की बात " में फिल्म निर्माण संलग्न प्रगलभ सेठ जी अपने यौवन का स्वप्न देखते हैं ।

वे तरुण अभिनेत्री के हृदय दर्पण अपनी छाया देखना चाहते हैं । किन्तु इन दर्पणों में प्राय: तरुण व्यक्तियों के चित्र ही उभरा करते है और इसीलिये बेचारे सेठ जी पैरों से कुचली जानेवाली दूब की तरह बार - बार उभरने का प्रयत्न करते हैं । अभिनेत्री मधुलता की दृष्टि युवक सजीव की ओर लगी रहती है । वहां सेठ चैनसुखदास यौवन के स्वप्नों को देखते हुए मधुलता से अपनत्व की भावना बढ़ाने का प्रयत्न करता है वहां राजीव में युव हृदय का प्रेम सुप्त रहता है । वास्तव में सजीव के स्वभाव में वे सब बातें होनी चाहिए थीं और सेठ में सजीव के स्वभाव की । लेकिन यह परि-स्थिति तथा चरित्र उलटा हुआ । अत: हास्य के लिए यहां पर्याप्त अवकाश मिलता है ।

" एक तोले अफ़ीम की क़ीमत " में भी परिस्थितियों की विद्रूपता चित्रित है जिस से दर्शकों का मनोरंजन होता है । इस एकांकी में असफल आत्महत्या के प्रयत्न हैं । यह आत्म हत्या का अभिनय निराश प्रेमियों के लिए वरदान बन जाता है । जो बात सौ जन्म में जीकर भी प्राप्त नहीं कर सकते , वह एक बार की आत्महत्या के प्रयत्न में प्राप्त हो जाती है । परिस्थितियों के " संयोग " अथवा " चान्स " का उपयोग कर इस एकांकी को सुखमय बना दिया गया है । युवक मुरारी मोहन अपढ़ गंवार लड़की से शादी करना नहीं चाहता है । विश्व मोहिनी भी आत्म-हत्या करना चाहती है । उस की इच्छा यह है कि वह अपने पिताजी को आर्थिक संकट से बचा दे । संयोगवश विश्वमोहिनी और मुरलीमोहन एक दूसरे के विचारों को जान लेते हैं । इन दोनों के मिलन से दोनों की समस्या-ओं का हल हो जाता है ।

भाव विकार के दो रूप होते हैं । परिहास और उपहास । परिहास में उदात्त मनोभाव अनुदात्त संदर्भ से जोड़ दिया जाता है और उपहास में उदात्त मनोभाव ही अनुदात्त हो जाता है । " आंखों का आकाश " परिहास का उदाहरण है और " फीमेल पार्ट " उपहास का । " आंखों का आकाश " एकांकी में नव विवाहित दम्पति के जीवन की झांकी प्रस्तुत की गई है । छोटी सीबात पर कलह उत्पन्न होता है और वह कलह आत्म हत्या के प्रयत्न तक पहुंचता है । कलह के पहले दोनों एक दूसरे के गुणों की प्रशंसा करने में निमग्न हैं और आदर्शों की दुनिया में भावुकता में लीन हो कर आनंदित रहते हैं । लेकिन व्यवहार में उन भावों के आचरण के संबन्ध में झगड़ा उठ खड़ा होता है । इस तरह उन के उदात्त मनोभाव अनुदात्त संदर्भ से जोड़ दिये गये हैं । जब संदर्भ भी उदात्त का रहे तो हास्य के लिए वहां स्थान नहीं रहता ।

उन्हीं के मनोभावों केविरुद्ध आचरण किया जाता है । जिस से हास्य की फव्वारे फूट पड़ती हैं । कलह के उपरान्त दम्पति का पुन: मिलन भी होता है । वह मिलन भी एक छोटी सीबात के कारण होता है । कलह के लिए गंभीर विषय की आवश्यकता नहीं पड़ती पर मिलन के लिए गंभीर बात आवश्यक होती है । भले ही वे नवदम्पती हो, वहां " महाभारत " में " प्रसन्न राघव " प्रवेश कर जाता है, लेकिन केवल सिर दर्द तथा पांव की चोट की घटनाओं के बल पर उनका मिलन विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता, ऐसा लगता है कि एकांकीकार से उन का मिलन कराने के लिए ये घटनाएं कल्पित की गई हों ।

" फीमेल पार्ट " एकांकी में उपहास है । विद्यार्थियों के छात्रावासों मे नारी पात्रों के अभिनय की कठिनाई अधिक है । वहांनारी-भूमिका का निर्वाह करने केलिए विद्यार्थियों के समक्ष कितनी कठिनाइयां उपस्थित हो सकती है, इस का अनुमान सहज ही किया जा सकता । उन्हीं कठिनाइयों का अनुभव इस एकांकी कीरचना की मूल प्रेरणा है । इस एकांकी में छात्रावास के कुछ विद्यार्थी " सोशल गैदरिंग " के लिए नाटक खेलना चाहते है । उन में पर्याप्त उत्साह है । अभिनय करने की इच्छा है । लेकिन नाटक के चुनाव में उन के सम्मुख कठिनाई आ उपस्थित होती है । उन लोगों ने जोनाटक चुना है उस में " धूप " की एक फीमेल पार्ट भी है जिस को लेने के लिए कोई तैयार नहीं होते । मि० खन्ना, जो इस पार्ट के लिए उपयुक्त समझा जाता है, गुस्से में आकर वहां से चला जाता है । यहां उदात्त मनोभाव अनुदात्त के रूप में बदल जाता है जिस से उपहास की सृष्टि हुई है । इस में " उल्लू " पात्र के अभिनय के लिए कोई संसिद्ध नहीं होता । भला उल्लू बनना कौन चाहता ? सब लोग यह तो स्वीकार करते हैं कि नाटक में ऐसा कोई पात्र नहीं रहता जो नीच हो । लेकिन पार्ट लेते समय वे पात्र की उच्चता तथा नीचता का विचार करते हैं । अंत मे कन्वीनर ही उल्लू बनने के लिए राजीहो जाता है । विद्यार्थियों के हास परि-हास युक्त वचनों से, उपहास के कारण दर्शकों को पर्याप्त मनोरंजन प्राप्त होता है । इस मे आधुनिक नारियों के प्रति व्यंग्य है जो सभी क्षेत्रों में अधिकार की मांग करती है । लेकिन अभिनय के क्षेत्र में कदम नहीं रखती ।

ध्वनि विकार व्याजोक्ति और वक्रोक्ति के रूप में प्रकट होता है । व्याजोक्ति में सत्य के गुप्त कर देने का वाणी- चातुर्य रहता है और वक्रो-क्ति में संदर्भ ही बदल देने की मनोवृत्ति रहती है ।

डा. वर्मा का " छींक " व्याजोक्ति का उदाहरण है और " एक अंक की बात ", एवं " छोटी सी बात " वक्रोक्ति के उदाहरण हैं,
" छींक " में " पंचम मिसिर " नामक पुराने विचारों के पंडित जी का व्यंग्यात्मक चित्रण किया गया है। पंचममिसिर प्रात: काल में नींद से जागने से लेकर रात में सोने तक पुरानी रीति-रिवाजें तथा पद्धतियों का पालन करने में तत्पर रहता है। उस की मनोवृत्तियां उन पद्धतियों में इतनी उलझ गई कि स्वप्न भी उसी तरह के आते हैं। उसे प्रात: काल लाला हर किसनदास के यहां मुहूर्त बताना है। उसकी चाह यह है कि लाला हर किसन दास की लड़की जानकी की शादी मनोहर लाल के लड़के से लगा दे। इस शुभ कार्य के लिए प्रस्थान करना साधारण बात कैसे होती है? इस के लिए वह पहले दिन से ही प्रबन्ध करता है। अपनी मतीजे संपत से यह कह कर रखता है कि चूहेदानी में नेवला पकड़कर रखे और देविदीन ग्वाले के पास खबर भेजी है कि प्रात: काल गाय और बछड़े को लेकर उस के घर के सामने दूध दुह ले। क्यों कि नेवला बड़ा शुभ ह शुकव शकुन है और गऊ दर्शन से शुभ कार्य पूर्ण हो जाता है। लेकिन ये बातें उल्टी होजाती हैं। प्रात: काल जब वे पलंग से उठ रहे थे कि सपंत छींकता है। इस तरह प्र प्रथम उस के जागने में ही व विघ्न पड़ता है। दूसरी बार उठते हैं तो एक बिल्ली सामने से निकल जाती है। इस तरह छींक और बिल्ली के अपशकुन होते हैं। संपत ने पिंजड़े में रोटी डालकर नेवले को पकड़ने का प्रयत्न तो किया पर वह पकड़ा नहीं गया। देवी दीन की गाय काजीहौस में है इसीलिए वह भैंस लेकर आता है। सपंत की छींकों का तांता बना रहता है, इधर देविदीन ग्वाले को भी छींक आती है। ग्वाले की अक्ल इतनी पक्की है कि वह छींक के आने के कारण को जान लेता है। वह तुरंत पूछ बैठता है ----" आप के बगलिया में कौनो मरिचा पिसाई रहा है। औई से जौने का देखों तौनो छीकत हैं। " ग्वाले से छींक के आने का कारण बतलाकर पंचममिसर पर परोक्ष रूप से व्यंग्य कसा गया है। संपत आकर यह बता देता है कि चूहेदानी में नेवले के स्थान पर चूहे फंस गये थे जिन के लिए बिल्ली इधर-उधर घूम रही थी। पंचममिसर क्रोध से जलते हुए बिल्ली को गाली देरहे थे कि उन को भी छींके आती हैं। एकांकी इसी चरमसीमा पर समाप्त होजाता है। पंचम मिसर के दोनों अपशकुनों के कारण अंत में बतलाये गये हैं। ककककककककककककककक एक तो पंचम मिसर का स्वयंकृत है। दूसरा तो पड़ोसियों के यहां मिरची की पिसाई है। इस एकांकी में प्रत्यक्ष ढंग से यह नहीं प्रकट किया गया है कि पंचम मिसर के ये विश्वास अंधे थे और शकुन एवं अपशकुन के पीछे जान देना मूर्खता है। इस सत्य को गुप्त रखा गया है। लेकिन यह अन्त में ध्वनित

होता है । व्याजोक्ति की ध्वनि - शक्ति के कारण हास्य उत्पन्न होता है । पंचमा मिसर के अज्ञान पर दर्शकों की हंसी रोके नहीं रुकती ।

" एक अंक की बात " और " छोटी सी बात " में वक्रोक्ति के कारण हंसी उत्पन्न होती है । " एक अंक की बात " में हेमचन्द्र और कामिनी लता के प्रेम की चर्चा की गई है । परीक्षाओं के दिनों में कामिनी लता रात भर जागती रही लेकिन उस का ध्यान पढ़ाई में नहीं लगता । पुस्तकों के पन्नों के बीच में प्रेमी हेमचन्द्र के ही दर्शन होते हैं । इस का परिणाम यह होता है कि कामिनीलता एक अंक के कम होने के कारण परीक्षा में फेल हो जाती है । लेकिन हेमचन्द्र आकर यह आश्वासन देता है कि " एक अंक की बात ? मेरे पास है वह अंक । " इस तरह कामिनीलता ए० प्रेम की परीक्षा में पास हो गई है इस में " अंक " शब्द के अर्थ पर व्यंग्य ---ध्वनि निकलती है । हेमचन्द्र " अंक " शब्द का प्रयोग क्रोड के लिए करता है । एकांकी के अंत में स्टेज मैनेजर भी यही कहता है ---

" जैंटिलमैन ! उत्सुक हैं जानने का परिणाम ?
लीडर में निकलता है कामिनी लता का नाम ।
उस ने गो प्रेम किया तो भी पास हो गई ।
प्रेम की सरलता भी इतिहास हो गई ।
अध्ययन और प्रेम -- आधुनिक काल के ।
दो हैं ये फूल इस सेन्चुरी की डाल के ।
दोनों फूलते हैं, चाहे उस में न गन्ध हो ।
हारता है गार्जियन, चाहे जरासन्ध हो ।
एक अंक की बात, उस को मिले हैं दो ।
इह यहां है एक वहां
थैंक्स नाऊ यू में गो । "

एक अंक की भी बात पर उस को दो मिले हैं । कितना व्यंग्य है । आधुनिक युग के युवक और युवतियों की पढ़ाई की असफलता का प्रमुख कारण यही है । इस में ध्वनि चमत्कार से हास्य की सृष्टि करते हुए वास्तविक सत्य पर प्रकाश डाला गया है । इस एकांकी की और एक विशेषता भी है । इसे स्वोक्ति रूपक मान सकते हैं । यह बहुत ही छोटा है । इस का अभिनय एक पात्र से भी संभव है । वह रंगमंच पर आकर अभिनय की मुद्रा में खड़ा हो और भिन्न भिन्न पात्रों के स्वरों में नाटक का अभिनय करे ।

नाटक के संकेत भी नेपथ्य की ओर इंगित करते हुए स्पष्ट किये जा सकते हैं ।

" छोटी सी बात " में भी इसी भांति वक्रोक्ति के सहारे हास्य को उत्पन्न किया गया है ।

बुद्धि विकार के दो रूप है ---- व्यंग्य और विकृति । व्यंग्य बड़ा तीखा होता है । एक बात कही जाती है और उसका मतलब दूसरी बात का हो जाता है । यह बहुरूपीय है । अमृत में विष डालना या फूल में कीट बनकर पहुंचना इसीका काम है । विष में बुझे हुए बाणों की नोक की भांति यह तीखा है । विकृति व्यंग्य और विद्रूप से उत्पन्न होकर वस्तु की सुसंगता को विचित्र तरह से मोड़ देती है । डा. वर्मा के " कहां से कहां " और " आशीर्वाद " व्यंग्य है और " इलेक्शन " और सही रास्ता, विकृति है । ~~कहां से कहां~~ कहां से कहां " और " आशीर्वाद " की चर्चा इस के पहले की गई है । यहां इतना स्पष्ट करना पर्याप्त है कि इन दोनों एकांकियों में व्यंग्य हास्य की उत्पत्ति कैसे हुई है । " कहां से कहां " में साहू की मनोप्रवृत्ति पर व्यंग्य कसा गया है और उस के स्वभाव में दिशा-परिवर्तन लाने का सफल प्रयत्न पुत्र और पुत्र-वधू करते हैं । उन के इस प्रयत्न में व्यंग्य है जिस से दर्शकों को हंसी आती है और साथ ही साथ सत्यता के तीखेपन का अनुभव भी करते हैं । " आशीर्वाद " में पति-पत्नी लाटरी के पुरस्कार की प्रतीक्षा में हवाई-किले बनाकर आनंदित होते है। लेकिन अंत में लाटरी के टिकेट का रुपया पंजाब के शरणार्थियों के रक्षा-कार्य के लिए दे देते हैं । इस में भी वही व्यंग्य है । वास्तविकताओं को भूल कर कल्पना लोक में विचरण करने वालों के प्रति व्यंग्य कसा गया है । उस दम्पति की आतुरता तथा अंतिम परिणाम से हास्य उत्पन्न हुआ है ।

विकृति व्यंग्य और विद्रूप से उत्पन्न होता है । " इलेक्शन " एकांकी में विकृति के कारण हास्य के लिए पर्याप्त स्थान मिला है । निर्वाचन पद्धति को व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है । उम्मीदवारों को यह ध्यान ही नहीं रहता कि वोटरों के भी अपने निजी विचार रहते ~~विचार रहते~~ हैं और उसके अपने कार्य अन्य कार्य भी होते हैं । उम्मीदवारों को केवल एक यही चिन्ता रहती है कि उन को किसी न किसी तरह वोट मिल जाय और चुनाव में विजय प्राप्त कर लें । वे वोटरों को इतना तंग करते हैं कि वोटर अपने+ वोट देने के अधिकार भी छोड़ने के लिए संसिद्ध हो जाते हैं । होस्टल में सभापति का चुनाव होरहा है और उस के चार उम्मीदवार हैं ।

उसी दिन होस्टल का [illegible] विधार्थी कैलास को शहर के प्रसिद्ध वकील केसरी नारायण ने चाय पर बुलाया है। उन की बेटी सरोजिनी के लिए वर का चुनाव उस पार्टी में किया जायेगा। कैलास अपनी भावी पत्नी के परिवार के सभी सदस्यों के वोटों का आकांक्षी है। वह ठीक समय पर पार्टी में जाना चाहता है पर होस्टल के इलेक्शन के उम्मीदवार एक के बाद एक आते रहते हैं और उसे जाने नहीं देते। उन उम्मीदवारों तथा उन के समर्थकों की बातों से कैलाश तंग आता है। इधर चाय पार्टी का समय हो जाता है। उस का मित्र नरेन्द्र उस को सान्त्वना देता है --- अरे यार। यह तो समझते नहीं कि तुम्हारे इलेक्शन में तुम्हारी कितनी शान बढ़ेगी ? जमाई बाबू की सौ बार खुशामद करो तब पार्टी में आते हैं। यह बात। वरना नहीं तो पहले ही बुलायें में चले गये, क्लर्क की तरह ! अरे हैड आफ दि डिपार्टमेण्ट की तरह जाओ। डीन की तरह जाओ, जाओ, वाइस चांसलर की तरह जाओ, शैंट लगा कर।" इस प्रकार इस एकांकी में व्यंग्य और विद्रुप के द्वारा विकृति की सृष्टि की गई है जिस से दर्शकों का मनोरंजन होता है।

"सही रास्ता" एकांकी भी विकृति के मनोभाव से रचा गया है। इस में समाज के उन व्यक्तियों पर व्यंग्य है जो बाहर से कुछ और अन्दर से बेईमान और धोखेबाज हैं। ये रंगे सियार हैं। समाज में इन की मान प्रतिष्टा कितनी हो जाती है। बाहर के सभ्य और शिक्षित परदे के भीतर उन के असली रूप छिपे रहते हैं। वकील, प्रोफेसर, कवि, सेठ अफसरों तक की पोल इस एकांकी में खोली गयी है। सत्य प्रकाश नामक एक सम्भ्रान्त व्यक्ति अपने जीवन में सच्चाई और ईमानदारी का अन्वेषण करते हैं। लेकिन उन को इन दोनों की प्राप्ति कहीं नहीं होती। जीवन का सही रास्ता कौन-सा है ? इस कपटी संसार से दूर जाने के लिए, अपने को विस्मृति में डाल देने के लिए शराब ही एक अच्छा साधन है। सत्यप्रकाश शराब की ही शरण में जाते हैं। क्यों कि उस के सिवा कोई अन्य चारा नहीं। उन्होंने संसार को देखा है, यहां की प्रत्येक - बात को परखा है। उन को यह पूर्णतः मालूम है कि वकील जयनन्द को कोई भी नहीं समझा सकता है कि उस की वाणी से हमेशा असत्य ही निकलता है। सेठ गिरधारी मल को यह समझानेवाला कोई नहीं कि उन की मिलें तेल के बजाय गरीब मजदूरों का खून पीती हैं। प्रोफेसर महेन्द्र कुमार को कोई भी समझा नहीं सकता कि रात दिन किताबों के पढ़ने से लियाकत नहीं आती। कवि केसरी को यह समझानेवाला कोई नहीं कि गले बाजी से कविता की कीमत नहीं बढ़ती। सप्लाई आफिसर जान मसीह को कोई समझा नहीं सकता कि गरीबों के कमाये हुए अन्न को गोदामों में भरने की जरूरत नहीं।

कपटी संसार को समझाने का सफल कार्य कौन संभाल सकता है ? संसार का कपट दूर किया ही नहीं जा सकता । इसी कारण तो सत्यप्रकाश शराबी होजाते हैं और उन की मृत्यु हो जाती है । उन्होंने अपनी अंतिम इच्छाओं को पूर्ण करने का भार अपनी भतीजी प्रभा के ऊपर रखा है । उन्होंने अपने मित्र वकील जयचन्द, प्रोफ़ेसर महेन्द्रकुमार कवि केसरी, सेठ गिरधारीमल और जान मसीह को भेंटें दी है जिन्हें एक कमरे में रखा है । भेंट के साथ साथ उन्होंने प्रत्येक मित्र के नाम पर शिल्प रखी है । सत्य - प्रकाश की भतीजी प्रभा एक एक भेंट स्लिप के साथ लाकर उन को देती है सत्य प्रकाश की हर एक भेंट विचित्र है । सेठ गिरधारीमल को भेंट स्वरूप एक खून से भरी बोतल दी गई है जिस केसाथ पत्र में लिखा है ---" इस खून से मैं आप की सहायता करना चाहता हूं । आप की मिलें तेल नहीं पीती, वे पीती है गरीब मजदूरों का खून --- खाना न मिलने की वजह से बेचारे मजदूरों में कितना खून रह गया होगा, यह आप भी जानते हैं --- आप की मिलों में खून की कमी होने पर यह खून काम में लाइएगा ---- थोडा ही सही, कुछ काम तो चलेगा । "

प्रो. महेन्द्रकुमार को दस चश्में भेंट में मिले हैं । पत्र में लिखा गया है - आप समझते हैं कि दुनियां से आंख बन्द करके किताबों को आंखें फाड कर पढ़ने से लियाकत आती है । पैदा कीजिये ऐसी लियाकत आप दुनियां की हस्तियों से अजान रहकर मेरी तरफ से आप लाखों किताबे पढ़ते रहें । "

वकील जयचन्द को एक डिब्बे में कुलंजन दिया गया है जिस के साथ पत्र में लिखा गया है कि झूठी बहस करने के लिए गला साफ कर लें ।

जान मसीह को एक दर्जन खालीबोरों की भेंट दी गई है । पत्र में यह लिखा गया है कि आज जनता दानों-दानों को तरस रही है, तड़प-तड़प कर मर रही है । उसे अन्न का एक दाना भी नहीं मिलता और आप गोदामों मे गेहूं और चावल के सैकड़ों बोरे जमा कर रहे हैं । गेहूं और चावल को भरकर रखने में शायद आप को खाली बोरों की कमी पड़ती होगी, इसलिए आप एक दर्जन खाली बोरे भेंट में स्वीकार कीजिए । "

सत्यप्रकाश ने अपने मित्रों को इतने सुन्दर व्यंग्य से सही रास्ता दिखलाया है । लेकिन उन मित्रों तथा " दर्शकों को आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहता जब वे सत्यप्रकाश को जीवित देखते हैं । सत्यप्रकाश ने अपने मित्रों को सही रास्ता दिखाने के लिए अपनी मृत्यु का झूठा नाटक खेला है ।

इस तरह इस एकांकी में व्यंग्य और विद्रूप के आधार पर विकृति के मनोभाव से हास्य को उत्पन्न किया गया है । समाज के वर्गों जैसे वकील, प्रोफ़ेसर, कवि सेठ आदि पर तीखा प्रहार है ।

इस प्रकार इन प्रहसनों में रंगीन स्वप्न में डूबे हुए तरुण-वर्ग के चित्र हैं, छोटी- छोटी बातों में रेशमी " धागो " की भांति उलझ पड़ने वाले दम्पतियों के मनोविकार का चित्रण है, परंपराओं में विश्वास रखने वाले प्रौढ़ और वृद्ध जनों के संस्कार अंकित हैं, मनोविज्ञान के सहज और स्वाभाविक रंगों में अपने अस्तित्व की घोषणा करने वाले प्रेमियों के चित्र हैं, स्वार्थान्ध सेठ, वकील प्रोफ़ेसर कवि आदि के व्यंग्यात्मक चित्र हैं । इन सब प्रहसनों में सुधार की प्रवृत्ति है । इन के एकांकियों का हास्य केवल हास्य के लिए नहीं है, वह अपनी सुधारात्मक प्रवृत्ति को छिपाये जनता के हृदय और मन का परिष्कार भी करता है । डा. वर्मा ने हिन्दू समाज को देखा और अन्ध विश्वासों और रूढ़ियों पर कुठाराघात किया है ।

अब हम इन के ऐतिहासिक एकांकियों के निर्माण क्रम और विशेषताओं पर विचार करेंगे । ऐतिहासिक एकांकी नाटकों के क्षेत्र में इन की प्रतिभा सब से अधिक चमक उठी है । इन का क्षेत्र विशेष रूप से ऐतिहासिक रहा है और उन्होंने ऐतिहासिक रचनाओं की सृजना अधिक भी की है । उन के इस क्षेत्र के प्रति अधिक आकर्षण का मूलकारण संभवत: यह है कि वे अपनी रचनाओं के द्वारा सांस्कृतिक पुनरुद्धार करना चाहते हैं । इसी कारण से उन रचनाओं में ऐसे आदर्शवाद की प्रतिष्टा की गई है जो जीवन की वास्तविकता से ओतप्रोत है और शिव तत्व से पुष्ट हो कर जनता के लिए मंगलकारी है । इन्होंने हमारे इतिहास का अध्ययन किया है और ऐतिहासिक चरित्रों का विश्लेषण करते हुए शाश्वत सत्यों की प्रतिष्टा अपनी रचनाओं में किया है ।

उन के ऐतिहासिक एकांकी के रचना-विन्यास में प्रमुख रूप में तीन तत्व दिखलाई मिलते हैं । प्रथमत: वे भारतीय इतिहास से कैसी घटना का चुनाव करते हैं जो नाटकीय परिधान में प्रस्तुत करने के लिए उपयुक्त हो, और वर्तमान जीवन से उस का किसी न किसी दृष्टि से संबंध हो । ऐतिहासिक होते हुए भी वर्तमान काल के जीवन को गति और प्रेरणा देने में समर्थ हो ।

इस तरह के हृदयस्पर्शी घटना के चुनाव के पश्चात् वे तत्कालीन , सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों का अध्ययन करते हैं। यह ऐतिहासिक अध्ययन नाटक के निर्माण क्रम का दूसरा तत्व है। डा. वर्मा इस अध्ययन के लिए पूरी उपलब्ध प्रामाणिक सामग्री का उपयोग करते हैं। पूर्णतः उस विषय के संबंध में ~~xxxxx~~ आश्वस्त होने के उपरान्त ही वे रचना कार्य में प्रवृत होते है। इसी कारण से उन का यह अध्ययन भी बड़ा पूर्ण होता है और उस के आधार पर रचित एकांकी भी ऐतिहासिक सत्यता से पूर्ण होते हैं।(०) भारतीय इतिहास जिन पात्रों के अथवा विभिन्न युगों की सांस्कृतिक एवं सामाजिक स्थितियों की अभिव्यक्ति में मौन रहा है, या अपनी अभिव्यक्ति में स्पष्ट नहीं है, उन के स्पष्टीकरण में डा. वर्मा ने अभूत पूर्व कार्य किया है। (१) इस के एकांकियों की ~~प्रक~~ सांस्कृ-तिक पृष्टभूमि बड़ी सच्ची रहती है। " प्रतिशोध " में धारा नगरी के छठी शताब्दी का चित्र अंकित है, श्री विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त पराक्रमांक में गुप्तकालीन सांस्कृतिक अध्ययन है। " चारुमित्रा " में अशोक कालीन संस्कृति का चित्रण है। " औरंगजेब की आखिरी रात " " तैमूर की हार " " दुर्गावती " आदि एकांकियों में मुगलकालीन जीवन को ~~पूरि~~ मूर्तिमान कर दिया गया है। " कलंक रेखा " में राजपूतों के जीवन का अंकन किया गया है। " ध्रुवतारिका " में १६७६ ई. की मारवाड की संस्कृति का चित्रण है। जिन ऐतिहासिक पुरुषों के चरित्र के संबन्ध में इतिहास मौन है, उन का अंकन कर वर्मा जी ने नये आदर्श की प्रतिष्टा की है। उदाहरण के लिए हम " शिवाजी " अथवा " कौमुदी महोत्सव " एकांकियों को ले सकते हैं। शिवाजी के चरित्र के विषय में इतिहास में स्पष्ट निर्देश नहीं किय गया है। डा. वर्मा ने शिवाजी के उज्जवल चरित्र का अंकन अपने एकांकी में किया है। चन्द्रगुप्त तथा चाणक्य के चरित्रों को लेकर डा. वर्मा के पहले भी नाटकों की रचना की गई है जिने में द्विजेन्द्रलाल राय, और जय शंकर प्रसाद के नाटक उल्लेखनीय है। डा. वर्मा ने अपने " कौमुदी महोत्सव " एकांकी में चन्द्रगुप्त तथा चाणक्य, की चारित्रिक परिधि खींचने का सफल प्रयत्न किया है।

---

(०) इस दशा में मुझे इतिहास के अध्ययन के साथ ही साथ तत्कालीन सांस्कृतिक पृष्टभूमि की भी पूरी तैयारी करनी पड़ी है। --- डा. रामकुमार वर्मा रजत रश्मि -- पृ. १४.

(१) चार ऐतिहासिक एकांकी --- नर्मदाप्रसाद खरे पृ २०.

डा. बेनीप्रसाद, डा. ताराचन्द, जयशंकर प्रसाद और द्विजेन्द्रलाल राय के दृष्टिकोणों का अध्ययन कर उन्होंने अपने अपने दृष्टिकोण के अनुसार उन चरित्रों का अंकन किया है। अपने मत को स्थापित करने के लिए उन्हें चन्द्र गुप्त और चाणक्य के चरित्रों के लिए बौद्ध तथा ब्राहमण ग्रन्थों, मैगस्थानीज़ और तत्कालीन इतिहास से संबन्धित समस्त ग्रन्थों का अनुशीलन करना पड़ा है। डा. वर्मा की दृष्टि व्यक्तियों के प्रक्षेपण (individual projection) पर है। मुद्रा राक्षस, द्विजेन्द्रलाल राय कृत चन्द्रगुप्त तथा प्रसाद कृत चन्द्रगुप्त नाटकों में चन्द्रगुप्त के व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा पर अधिक बल नहीं दिया गया है। इन नाटककारों की दृष्टि तत्कालीन वातावरण पर भी है। उस के माध्यम से चन्द्रगुप्त का चित्रण किया गया है। चन्द्र-गुप्त और चाणक्य दोनों अपने अपने महान व्यक्तियों को लिए सामने पस्तुत होते हैं। ये दोनों अपने अपने क्षेत्र में महान हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि ये दो ज्वालामुखी अपने अपने आवेगों में ऐसा विस्फोट कर रहे हैं जिस से उन की शक्ति प्रकट होती है। इस भांति डा. वर्मा का ध्यान व्यक्तियों के पृथक अस्तित्व। (Isolation of personalities) पर है। इस का कथानक मुद्राराक्षस की कथावस्तु के अनुसार है जिस में कुसुमपुर की विजय के उपरान्त कौमुदी महोत्सव के मनाये जाने का आयोजन है। तत्कालीन वातावरण के सृजन करने के लिए कौटिल्य के अर्थ शास्त्र का अनुशीलन किया गया है। पाटली पुत्र का भौगोलिक ज्ञान मेगस्थनीज़ तथा हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता से लिया गया है और कौमुदी इस महोत्सव की सजावट आदि का वर्णन कल्पना के बल पर किया गया है। चन्द्रगुप्त के इति-हास से उस का जो व्यक्तित्व मिला है, उस को मनोविज्ञान में इस प्रकार सुसज्जित किया गया है कि चन्द्रगुप्त के द्वारा प्रयुक्त समस्त उपमाएं वीररस से परिपूर्ण हैं। चन्दगुप्त के = वार्तालाप उस के वीरत्व के साथ राजसी प्रकृति का प्रतीक है। (२) ऐतिहासिक नाटकों को सांस्कृतिक पृष्टभूमि में, पात्रों के चरित्र को मनोवैज्ञानिक ढंग से व चित्रित करने का प्रयत्न किया गया है। (३) इस प्रकार उन के ऐतिहासिक एकांकियों के निर्माण क्रम में सांस्कृतिक पृष्टभूमि का अध्ययन दूसरा प्रमुख तत्व है। तीसरा तत्व प्रतिपादित ऐतिहासिक कथा वस्तु के उप-युक्त परिस्थित का चुनाव है। अंतिम प्रभाव की व्यंजना परिस्थिति(Set-up) की उपयुक्तता पर ही आधारित रहती है।

---

(२) डा. रामकुमार वर्मा कौमुदी महोत्सव भूमिका पृ. ५१ - ५२.

(३) मुझे इतिहास के साथ ही साथ तत्कालीन सांस्कृतिक पृष्टभूमि की पूरी तैयारी करनी पड़ती है। पात्रों के चरित्र को मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रित करने की आवश्यकता पड़ती है। मनोविज्ञान की वह स्थिति जहां एक बार तैयार हो गई फिर पात्रों का विकास अपने आप होने लगता है। वे कार्य करते हैं और अपनी ही संवेदनाओं से अन्य पात्रों और परिस्थितियों से संपर्क या संघर्ष लेना प्रारंभ कर देते हैं। अन्तर्द्वन्द्व की यह मानसिक प्रतिक्रिया आप मेरे सभी नाटकों में देखेंगे। डा. वर्मा, रजतरश्मि पृ. १५.

अतः डा. वर्मा परिस्थिति के चुनाव में विशेष सतर्क रहते हैं और उन्हें इस का पूरा ध्यान रहता है कि उस परिस्थिति में संकलन-त्रय का पूर्ण निर्वाह हो सके। इतिहास से गृहीत बड़ी बड़ी घटनाओं को इस प्रकार एकोन्मुख प्रवाह में गुम्फित किया जाता है कि तीनों संकलनों में से एक भी संकलन टूट न पावे।

आवश्यक प्रभाव की सृष्टि करने के लिए वे कुछ ऐसे काल्पनिक पात्रों की भी सृजना करते हैं जो इतिहास सम्भव प्रतीत होते हैं और जिन के द्वारा प्रधान पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उन्मेष होता है। वे कल्पना का सहारा उसी हद तक लेते हैं जहां तक ऐतिहासिक पात्रों के व्यक्तित्व को प्रकाशित करने में सहायता पहुंचाने और वह कल्पना ऐतिहासिक सत्य सा भासित भी होवे। डा वर्मा ने इतिहास के महान व्यक्ति चन्द्रगुप्त, दुर्गादास, शिवाजी, श्री विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त पराक्रमांक, औरंगजेब, अशोक, आदि के चित्र अंकित किये हैं। उन के साथ सम्बन्ध छोटी-बड़ी घटनाएं अथवा विभिन्न नाटकीय परिस्थियां भले ही काल्पनिक हों, लेकिन उन की चरित्रगत विशेषताएं तथा दुर्बलताओं ऐतिहासिक सत्यता लिए रहती हैं। अपने नाटकों को ऐतिहासिक कसौटी पर खरा उतारने के लिए डा. वर्मा ने ऐसी नाटकीय स्थितियों का निर्माण कुशलतापूर्वक किया है कि उन उन पात्रों के इतिहास प्रसिद्ध गुण उभर कर स्पष्ट हो सकें। इस प्रकार ऐतिहासिक प्रामाणिकता की दृष्टि से उन के नाटक सफल हैं।

किसी ऐतिहासिक पात्र के चरित्र चित्रण करते समय, डा. वर्मा उस में स्वाभाविकता लाने के लिए उस चरित्र का परीक्षण कई दिशाओं से करते हैं। चरित्रगत संवेदनाओं को दृष्टि-बिन्दु बनाकर समस्त घटनाओं को उसी में समाविष्ट करने का सफल प्रयत्न करते हैं। इस के लिए उन के सामने अनेक प्रश्न उठते हैं। वे सोचते हैं कि कोई पात्र किस गुण के कारण निर्णीत दिशा में किस हद तक जा सकता है? उस के स्वभाव में ऐसे कौन दुर्गुण अथवा गुण हैं जिन के कारण उस से किन किन स्वाभाविक दुर्बलताओं अथवा उच्चताओं की आशा की जा सकती है? इन प्रश्नों के समाधान के रूप में वे ऐसी सभी संभावनाओं की कल्पना करते हैं। उन संभावनाओं को गति प्रदान करने के उद्देश्य से कुछ गौण पात्रों का सृजन भी करते हैं। जिन के कार्यों से प्रमुख पात्र की चारित्रिक विशिष्टताओं अथवा दुर्बलताओं पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है। कहीं कहीं वे ऐसी घटनाओं की कल्पना भी करते हैं जो प्रमुख पात्र के कार्यों के कारण बन कर स्वाभाविकता की वृष्टि में सहायक होती हैं। उदाहरण के रूप में हम उन के किसी भी ऐतिहासिक एकांकी के प्रमुख पात्र के चरित्र का विश्लेषण कर सकते हैं। "दीपदान" एकांकी में त्यागशीला पन्ना दाई का चित्रांकन किया गया है।

संसार में कोई भी माता अपने बच्चे को अपनी आंखों के सामने मरवा नहीं डालती । लेकिन पन्नादाई ने अपने पुत्र को मरवा डाला है । यह कृत्रिम ऐतिहासिक सत्य है । इस सत्य की स्थापना में स्वाभाविकता का पुट लाने के लिए डा. वर्मा को अनेक प्रकार से विचार करना पड़ा है । उन के सामने यह प्रमुख प्रश्न उठ खड़ा हुआ है कि ऐसी कौन-सी जबर्दस्त संवेदना है जिस के कारण मातृहृदय पर पत्थर रख कर पन्ना दाई ने पुत्र का बलिदान किया है ? ऐसी भाव बिन्दु को पकड़ना था चाहिए और ऐसी घटना की कल्पना करनी चाहिए उस अमर बलिदान का कारण बन सके । कार्य-कारण संबन्ध की स्थापना अत्यन्त आवश्यक है जिस के बल पर ही वास्तविकता का आभास रचना में दिया जा सकता है । डा. वर्मा ने दीपदान के उत्सव की कल्पना की है जो पन्नादाई के बलिदान की कारण को प्रस्तुत करता है । इसी दीपदान के उत्सव के मूल में काम करनेवाली बनवीर की कुतंत्र की भावना छिपी हुई है । जब पन्नादाई के विवेक ने उस कुतंत्र की भावना को पहचाना है तो उस के हृदय की क्षात्राणी की जागृति हुई है । उस ने चित्तौड़ के कुलदीपक उदयसिंह को बचाना अपना कर्तव्य समझा । बनवीर की क्रोधाग्नि में अपने पुत्र को जला डालने के सिवा उस के सामने दूसरा मार्ग नहीं था । इस तरह इस में पन्ना दाई की चरित्रगत विशिष्टता को स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए उत्सव की कल्पना की गई है । इसी भांति कुछ एकांकियों में गौण पात्रों की सृष्टि इस उद्देश्य से की गई है कि उन के कार्यों से प्रमुख पात्र के गुण सक्रिय बन जावें । " स्वर्णश्री " एकांकी में केवला, नामदत्त और बृहद्रथ के चरित्र पुण्यमित्र के चरित्र को उभारने के लिए चित्रित किये गये है । इन गौण पात्रों से और भी कार्यों की सिद्धि की गई है । उन के द्वारा घटनाओं के रिक्त आंशो को, और सांस्कृतिक अध्ययन को पूर्ण किया गया है एवं श्रृंखला की कड़ियां जोड़ी गई हैं । " औरंगजेब की आखिरी रात " में औरंगजेब के व्यक्तित्व के दो विभु पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है । मृत्यु शय्या पर लेटे हुए शाह शाह औरंगज़ेब में उस के मनुष्य-औरंगजेब का रूप पृथक होकर उस के कृत्यों की आलोचना करता है । मनुष्य और शाहंशाह दोनों रूपों के बीच में पारस्परिक संघर्ष चलता है और अंत मे मनुष्य रूप की विजय होती है । उसी रूप को उभार कर औरंगजेब में पश्चात्ताप को दर्शाया गया है ।

इन के ऐतिहासिक एकांकियों में दो तत्व विशेष महत्व के हैं । इन में भारतीय वीरों के उज्जवल चरित्रों का प्रचार किया गया है और दूसरा ऐतिहासिक पृष्टभूमि और सांस्कृतिक गौरव के प्रति सच्चाई भी निहित है ।

इन नाटकों की रचना के मूल में नैतिक आदर्शवाद की स्थापना करने की प्रवृत्ति काम करती हुई दिखाई पड़ती है। इन में आदर्शवाद के दर्शन होते हैं पर वह आदर्श व्यावहारिक है। डा. वर्मा ने प्रमुख रूप से अपने एकांकियों में मध्ययुगीन भारतीय इतिहास और संस्कृति को पृष्ठभूमि के रूप में लिया है। कुछ नाटकों में मुगल काल का चित्रण भी किया गया है। उन्होंने प्राचीन ऐतिहासिक चरित्रों को अंकित करने के लिए ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का निर्माण सच्चाई से किया है। "समुद्रगुप्त पराक्रमांक" "श्री विक्रमादित्य," "कौमुदी महोत्सव" "ध्रुव-तारिका," "शिवाजी," चारुमित्रा, कलंक रेखा, कादम्ब या विष, कृपाण की धार, प्रतिशोध, पृथ्वीराज की आंखें, आदि नाटकों में भारतीय चरित्र की उच्चता, पवित्रता और प्राचीन सांस्कृतिक गौरव का अंकन किया गया है। हिन्दू सम्राटों का जीवन भारतीय चरित्र का प्रतीक है। उन की देश भक्ति, वीरता, शौर्य, स्वाभिमान, स्वातंत्र्य प्रेम आदि विशिष्ट गुणों पर प्रकाश इस उद्देश्य से डाला गया है कि देश के नवयुवक उन वीरों के उज्जवल चरित्र से अनुप्राणित होवें।

यहां हम कुछ एकांकियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करेंगे।

"श्री विक्रमादित्य" एकांकी सन् ५७ ई. पूर्व की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रचित है। इस में सम्राट विक्रमादित्य की न्याय-बुद्धि, विवेक, तर्क बल, सूक्ष्म दृष्टि आर्य धर्म के प्रति श्रद्धा की भावना आदि चारित्रिक विशेषताओं का अंकन किया गया है। उस युग की भारतीय नैतिक व्यवस्था को प्रतिष्ठित कर, वर्तमान युग के लोगों के सामने आदर्श को प्रस्तुत करना नाटककार का मुख्य उद्देश्य है। इस में वर्तमान युग की नैतिक व्यवस्था के साथ वैषम्य दिखलाने का प्रयत्न है। इस के कथानक का निर्माण कुतूहल में हुआ है। कुतूहल के कारण दर्शकों की दृष्टि एकांकी की केन्द्र बिन्दु को पकड़ने में अंत तक लगी रहती है। इस एकांकी की कलागत विशेषताओं का उल्लेख दूसरे परिच्छेद में किया गया है।

"समुद्रगुप्त पराक्रमांक" का कथानक ४२० विक्रम संवत् के पूर्व भारतीय इतिहास की पृष्ठभूमि पर महाराज समुद्रगुप्त के जीवन से संबन्धित है। इस में समुद्रगुप्त की न्यायप्रियता, सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि और प्रतिभा का अंकन किया गया है। समुद्रगुप्त पराक्रमांक ललित कलाओं के पारखी ही नहीं थे, संगीत कला में भी अत्यन्त प्रवीण थे। उसी संगीत विद्या के प्रयोग से और अपनी तीक्ष्ण बुद्धि कुशलता से असली अपराधी को पहचान लेते हैं।

हिन्दू सम्राटों के व्यक्तित्व में ही एक ऐसी विचित्र शक्ति थी कि उन के सम्मुख अपराधी स्वयं अपने अपराध को स्वीकृत करता था । उन के व्यक्तित्व के विशिष्ट गुणों में ऐसा आकर्षण था कि उन के सामने असत्य भाषण करना किसी अपराधी के वश की बात नहीं थी । समुद्रगुप्त न्याय का पालन करने में इतना तत्पर हैं कि न्याय की प्रतिष्टा में मरण को भी पर्व मानते हैं । उन के व्यक्तित्व में जहां एक ओर राजनीतिक ~~बव्वप~~ अन्तरदृष्टि की तीक्षण प्रतिभा है वहां दूसरी ओर कोमल अनुभूतियों की व्यंजना के लिए ~~उग्र~~ उपयुक्त विशाल सरस हृदय भी ~~था~~ है। उन के चरित्र के इन दोनों पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है ।

" शिवाजी " में शिवाजी की वीरता, मातृ भक्ति, स्वदेश प्रेम, नैतिक दृढ़ता, स्त्रियों के प्रति सभ्य व्यवहार आदि गुणों का चित्रण हुआ है । शिवाजी में चारित्रिक दृढ़ता इतनी बलवती है कि वे सौन्दर्य की प्रतिमा गौहर बानू केसौन्दर्य को देखकर वासना के चुंगल में नहीं फंसते । गौहर बानू में उन्हें माता जीजाबाई के दर्शन होते हैं । उन का यह कथन कितना मार्मिक तथा आदर्श पूर्ण है । ----" मैं सिर्फ यही सोचता हूं कि अगर मेरी मां जीजाबाई आप की तरह खूब सूरत होती तो मैं भी एक खूबसूरत सरदार होता ।" इसी पवित्र दृष्टिकोण के कारण शिवाजी अपने सरदारों के अपराध को सारा उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेते हैं और गौहरबानू के सम्मुख अपने अपराध को स्वीकार करते हैं । शिवाजी के व्यक्तित्व की महानता को उन के सरदार भी समझ नहीं पाते । अपने स्वार्थ की ~~पूव०~~ पूर्ति करने के लिए आभा जी ने गौहर बानू को शिवाजी के चरणों में समर्पित करते हैं ---- " आभा जी ! तुम जानते हो कि सेना के आक्रमण में मेरा आदेश है कि शत्रुओं के देश की स्त्रियों का किसी तरह भी अपमान नहीं होना चाहिए । उन्हें मां- बहनों के समान आदरणीय और पूज्य समझकर उन की ~~व~~ इज्जत करनी चाहिए । बच्चों को भी उन के माता-पिता से जुदा मत करो, गाय मत पकड़ो और ब्राह्मणों के ऊपर अत्याचार मत करो -- कुरान की उतनी ही इज्जत करो जितनी भवानी की या समर्थ गुरु रामदास की वाणी की । मसजिद का दरवाजा उतना ही पवित्र है जितना तुम्हारे मन्दिर का कलश । शिवा को इस्लाम धर्म उतना ही पूज्य है जितना हिन्दू धर्म । - - - - - - - - - - - - - - -

- - - - - - - - - - - - - - - - - मेरे सेनापति होकर तुम ने मेरे सिद्धान्तों के विरुद्ध ऐसा क्यों किया ? क्या तुम ने मुझे सदाचार की कसौटी पर कराना चाहा था,या मेरी परीक्षा ली या अपने स्वार्थ-साधन का रास्ता तैयार करना चाहा ? तुम ने समझा होगा कि गौहरबानू के सौन्दर्य के सामने शिवाजी का सिद्धान्त पानी हो जायेगा, किन्तु भवानी का भक्त शिवाजी भवानी का भक्त होने की योग्यता भी रखता है । जीजाबाई कन्ना

पुत्र शिवाजी शत्रु की स्त्री में भी जीजाबाई की तस्वीर देखता है ।"

शिवाजी के इस वक्तव्य के हर एक शब्द में भारतीय संस्कृति बोल रही है । शिवाजी भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं । शिवाजी में सहानुभूति, स्वावलंबन उत्साह और क्रियाशीलता की तेजस्विनी शक्ति है । जैसी चरित्र दृढ़ता की ज्योति शिवाजी में है वैसी ही गौहर बानू और सोना में भी है । इन तीनों का एक स्थल पर समन्वय हमारे देश की भावनाओं का एक उज्जवल ज्योति स्तंभ है जो हमारे युवक और युवतियों की जीवन-नौका के कठिन मार्ग को आलोकित करने की क्षमता रखता है । इस एकांकी की शिल्प संबधी विशेषताओं की चर्चा दूसरे परिच्छेद में की गई है । यहां इतना कहना पर्याप्त है कि एकांकी के प्रमुख तत्त्व चारित्रिक द्वन्द्व तथा कौतूहल का सफल अंकन इस में किया गया है । वर्माजी के एकांकियों में इस एकांकी का महत्व इसी कारण से अधिक है ।

" कौमुदी महोत्सव " डा. वर्मा के ऐतिहासिक एकांकियों में चरित्र चित्रण तथा ऐतिहासिक सत्यता के लिए श्रेष्ट एकांकी है । इस में चन्द्र-गुप्त मौर्य के लघु के व्यक्तित्व का न्यायपूर्ण प्रदर्शन किया गया है । विशाख दत्त रचित मुद्राराक्षस, द्विजेन्द्रलाल राय रचित चन्द्रगुप्त और जयशंकर प्रसाद कृत चन्द्रगुप्त आदि इस विषय से संबन्धित रचनाओं में चन्द्रगुप्त के व्यक्ति-त्व का न्यायपूर्ण चित्रण नहीं हुआ है । उन में चन्द्रगुप्त केवल चाणक्य के हाथ की कठपुतली के रूप में हमारे सामने आता है । डा. वर्मा ने चन्द्रगुप्त के व्यक्तित्व को न्याय देने के उद्देश्य से " कौमुदी महोत्सव " की रचना की है । इन का चन्द्रगुप्त वीर, पराक्रमशील, चतुर सम्राट था । डा. वर्मा यह मानते हैं कि चन्द्रगुप्त की उन्नति के मूल में चाणक्य की कूटनीति और अन्तर्दृष्टि का साथ है लेकिन वे यह भी कहते है कि चन्द्रगुप्त का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व भी है । डा. वर्मा की दृष्टि चन्द्रगुप्त और चाणक्य के व्यक्तित्वों के प्रेक्षोलन पर है । एकांकी में उत्सुकता की मात्रा पर्याप्त है जो दर्शकों की दृष्टि को अपनी ओर आकृष्ट किये रहती है ।

" चारुमित्रा " में सम्राट अशोक के हृदय परिवर्तन का अंकन किया गया है । कलिंग युद्ध के पश्चात् क्रूर, अत्याचारी, हिंसक, अशोक दयालु, अहिंसाव्रती के रूप में बदल जाता है । इस हृदय परिवर्तन के मूल में न केवल बौद्ध धर्म का प्रभाव और न असंख्य वीरों की रक्त-नदियों का प्रवाह है । इस युद्ध विराम के पहले भी अशोक ने अनेक युद्ध किये थे। रक्त बहाना उस के लिए कोई नई बात नहीं थी । तो इस युद्ध के हिंसा-काण्ड से उस में पश्चात्ताप की भावना कैसे जागृत हुई ?

अशोक के इस हृदय परिवर्तन को स्वाभाविक सिद्ध करने के लिए ऐसी घटनाओं की सृष्टि की गई है जो उस के लिए कारण बने । " चारुमित्रा " नामक सैविका पात्र की कल्पना की गई है जो जन्म से कलिंग बालिका है । उस बालिका की स्वामिभक्ति और बलिदान का चित्रांकन किया गया है । अशोक के मानसिक परिवर्तन में चार घटनाओं का हाथ है । (००)० १. सैनिकों द्वारा एक निरीह शिशु की हत्या २. उस शिशु की माता की मृत्यु ३. महारानी तिष्यरक्षिता का शान्ति के लिए आग्रह ४. चारुमित्रा की देशभक्ति और स्वामिभक्ति । इस एकांकी में हू इतिहास का उतना ही अंश लिया गया है जितना अशोक के हृदय परिवर्तन के निर्माण में सहायक है ।

" स्वर्ण श्री " एकांकी १७५ ई. पूर्व पाटली पुत्र के अंतिम मौर्य सम्राट बृहद्रथ तथा उस के सेनापति पुष्यमित्र के चरित्रों का तुलनात्मिक अध्ययन किया गया है । शासक को प्रजा के सुख दुःख का ख्याल रखना चाहिए । वह अपनी इच्छा के अनुसार कार्य-क्षेत्र में अग्रसर होता है तो उस का पतन अवश्यंभावी है । नारी के गौरव की रक्षा करना सम्राट का प्रमुख कर्तव्य है । जब बृहद्रथ ने इस कर्तव्य को भुला दिया है तो प्रजा के पक्ष में खड़े हो कर सेनापति पुष्यमित्र न्याय की प्रतिष्ठा करता है । इस में पुष्य मित्र के व्यक्तित्व का सफल तथा सुन्दर अंकन हुआ है । उस की कार्य-दीक्षा से अन्याय का दमन और न्याय की प्रतिष्ठा होती है । " स्वर्णश्री " नारी जीवन के गौरव का प्रतीक है ।

" कलंक रेखा " में राजपुत्र रमणियों के साहस दृढ़ता और देश भक्ति का अंकन किया गया है । अपने विवाह के कारण राज्य को संकट में पड़ा देखकर उदयपुर की कृष्णाकुमारी ने विष-पान कर अपनी बलि दे दी जिस से समस्त भारतीय नारियों के मस्तक पर कीर्ति की रेखा खिंच गई । लेकिन उस की यह कीर्ति की रेखा उस के पिता उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के लिए कलंक रेखा बन गई है । कारण यह है कि पिता होने के कारण पुत्री की रक्षा का भार उस पर था । लेकिन शत्रुओं के आतंक से उस ने पुत्री की हत्या का प्रस्ताव स्वीकार किया है और साथ ही साथ उस के वध के लिए आदेश भी दे दिया है । पहले कृष्णा कुमारी के चाचा उस क्रूर कृत्य के लिए संसिद्ध होते लेकिन उस की आत्मा उसे धिक्कारती है । कृष्णाकुमारी अपने पिता तथा चाचा की चिन्ता दूर करने के लिए स्वयं विष का पान करती है । उस के अपूर्व बलिदान साहस, और दृढ़ता अनुकरणीय हैं । इस एकांकी में मातृ-हृदय की व्याकुलता का अंकन कुशलतापूर्वक किया गया है । पितृ हृदय का अन्तर्द्वन्द्व भी सुन्दर बन पड़ा है ।

" ध्रुव तारिका " में त्याग, राष्ट्र-प्रेम राष्ट्र-धर्म और भाई-बहन के प्रेम के आदर्श प्रस्तुत किये गये हैं । मारवाड के यशस्वी सेनापति राठौर दुर्गादास राजपूती गौरव और भारत की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए अजीत सिंह से संघर्ष करते हैं । अजीतसिंह शाहजादा अकबर की पुत्री सफ़ीयत-उन्निसा से प्रेम करता है और समझता है कि प्रेम उस की व्यक्तिगत रुचि का प्रश्न है । उसका का सबन्ध राज्य से नहीं । वह दुर्गादास को द्वन्द्व युद्ध का निमंत्रण देता है और उन्हे अपने राज्य से निर्वासित कर देता है । यह समाचार सुनकर भारतीय गौरव की रक्षा करने के लिए सफ़ीयत-उन्निसा सब से बड़ा बलिदान करने को प्रस्तुत हो जाती है । अजीत सिंह से अपने संबन्ध भाई-बहन का कर लेती है । इस में दुर्गादास के वचनों में भारतीय मर्यादा का विश्लेषण हुआ है । वह कहता है --- मैं नहीं, राज्य परिषद तुम्हें निर्वासित करेगी । राजकुमार ! मारवाड़ भूमि केरज कणों से निर्मित राज्य वंश के खिलौने ! तुम्हे इस राज्य वंश की मर्यादा का इतना भी ध्यान न आया कि तुम इस प्रसंग पर मौन रहजाते ? क्या तुम्हारे लिए वीर राजपूतों का जो रक्त बहा है, वह बालकों की क्रीड़ा थी ? आज फिर राजस्थान में पारस्परिक विद्रोह की ज्वाला धधके जिस में सारी मर्यादा और समस्त गौरव फिर भस्म होजाय । "

" कादम्ब या विष " एकांकी में ४५५ ई. के मगध के सम्राट कुमार गुप्त के चरित्र का अंकन किया गया है । गुप्त साम्राज्य में कलाओं और वैभव की इतनी उन्नति हुई कि उस युग का वातावरण विलासमयी हो गया था । विलास ही उस के पतन का कारण बन गया । कुमारगुप्त की द्वितीय पत्नी अनंत देवी के षाड़यन्त्र का शिकारी स्वयं सम्राट होते हैं । स्कन्दगुप्त का निर्वासन और पुरगुप्त का युवराज पद एक ही अभिसन्धि की दो शाखाएं है । जब पुरुष नारी सौन्दर्य के दास बनता है तो उसका सारा विवेक नष्ट हो जाता है। पुरुष को हमेशा स्वामी बन कर सौन्दर्य की आराधना करनी चाहिए । कुमार गुप्त के चरित्र के इसी पहलू पर एकांकीकार ने प्रकाश डाला है । इस में गुप्तकालीन सांस्कृतिक एवं वातावरण का सुन्दर अंकन हुआ है ।

" दुर्गावती " में भारतीय नारी की शक्ति और सौन्दर्य के सम्मिलित स्वरूप का अंकन किया गया है । नारी के कुसुम के कलेवर में कुलिश की सृष्टि भी होती है । दुर्गावती ने अपनी भावनाओं को नींव का पत्थर बनाकर कर्तव्य के प्रासाद का निर्माण किया है जिस का कलश मध्य युग के आकाश में सूर्य की भांति देदीप्यमान रहा दुर्गावति का यह कथन उस की तेजस्विता का परिचायक है -----

" जिस राज्य में घटनाएं रहस्य का अवगुंठन अपनेमुख पर डाल लेती हैं उस राज्य की दृष्टि अपने पैरों तक ही सीमित रह जाती है, अपने अंग भी नहीं देख सकती । मेरी राजनीति मे उहस्य के लिए स्थान नहीं है । रहस्य कला के लिए वरदान हो सकता है, किन्तु राजनीति के लिए अभिशाप है । " दुर्गावति के इस मनोविज्ञान में भारतीयनारी ने अपनी तेजस्विता संसार के समक्ष उपस्थित की है ।

" औरंगजेब की आखिरी रात " में मृत्यु शय्या पर लेटे हुए शाहंशाह औरंगजेब के पश्चाताप और आत्मग्लानि का चित्र मार्मिक ढंग से खींचा गया है । इस के कथोपकथन मनोविज्ञान के आधार पर रचे गये हैं । अपनी ऐतिहासिक सत्यता और मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति के लिए यह एकांकी डा. वर्मा के एकांकियों मे प्रमुख स्थान रखता है ।

" तैमूर कीहार " में ऐतिहासिक सत्य और कल्पना दोनो का सहारा लिया गया है । भारत के प्राचीन संस्कारों में सत्य रक्षा के लिए निर्भीक बनना प्रत्येक बालक का आदर्श था । यह निर्भीकता उस के चरित्र की कसौटी पर कंचन की रेखा जैसी स्पष्ट होती थी । यह प्रकृति का सब से बडा बल है --- सौन्दर्य है - सौन्दर्य का सब से बड़ा
बल का सब से बड़ा सौन्दर्य0०००००००सौन्दर्य००००सब०ये कल्याण है । इस एकांकी के पात्र बालक बलकरण, उसकी माता कल्याणी इसी मनोविज्ञान के प्रतिक है । इसी भांति तैमूर में वीरता का मनोविज्ञान चित्रित किया गया है। इतिहासकार कहते हैं कि तैमूर बड़ा निर्दयी था। लेकिन डा. वर्मा का अभिप्राय यह हैकि जो शक्ति शाली होता है उस में शक्ति को परखने की क्षमता भीहोतीहै। तैमूर पराक्रमशाली है अत: उस में शक्ति और वीरता को परखने की क्षमता भी है । इस मनोविज्ञान के आधार पर इस एकांकी की रचना हुई है । बालक बलकरण धैर्य, साहस और वीरता के साथ तैमूर से लड़ने के लिए संसिद्ध होता है। उस की वीरता केसामने शक्तिशाली तैमूर नतमस्तक होता और बलकरण की इच्छा के अनुसार उस के गांव को छोड़ कर चला जाता है । इस तरह इस में तैमूर जैसे विजेता की एक भारतीय बालक के द्वारा हार दिखलाई गई है । इस कल्पित घटना से एक ओर तैमूर का०हैरि० तैमूर का ऐतिहासिक व्यक्तित्व निखर कर उभर आया है तो दूसरी ओर भारतीय वीर बालकों का आदर्श छवविवविव उपस्थित किया गया है ।

" प्रतिशोध " में कवि भारवि के जीवन की प्रमुख घटना चित्रित है जिस में भारवि के पिता उसे दण्ड देते हैं । संस्कृत के महापंडित, श्रीधर अपने पुत्र की प्रतिभा से परिचित भी नहीं, बविव अपितु उन मे ऐसे पुत्र के पिता होने का गर्व भी विद्यमान है । लेकिन वे यह नहीं चाहते कि उन के पुत्र में अहं की भावना हद से अधिक जागृत होवे और उस की प्रगति में बाधक बने ।

इसी कारण से अपने पुत्र का अपमान सब पंडितों के सामने करते हैं। महा कवि भारवि अपमान को सहन नहीं करते। वे समझते हैं कि जब तक पिता वर्तमान हैं तब तक उन का अपमान होता रहेगा। पिता को समाप्त करने के लिए रात में घर पहुंचते है लेकिन पिता का और ही रूप देखता है। उन्हें ज्ञात होता है कि वह उन की पुत्र-वत्सलता ही है कि वे पंडितों के बीच भारवि की निन्दा कर उस के गर्वांकुर को नष्ट करते है। ग्लानि और पश्चाताप से कवि भारावि का हृदय भर आता है। पिताजी से दण्डित होना चाहते तो पिता की आज्ञा यह मिलती है कि वे छः मास तक श्वसुरालय में जाकर सेवा करे और झूठे भोजन पर अपना पोषण करे। अहंकार से प्रतिमा उसी तरह कुंठित हो जाती है जैसे भयानक भूकंप से प्रकृति की सहज शोभा नष्ट हो जाती है। अतः कलाकार के लिए आवश्यक है कि वह अहंकार के आघातों से प्रतिभा की रक्षा करे।

" पृथवीराज की आंखे " डा. वर्मा की प्रारंभ कालीन कृति है। इस में पृथवीराज चौहान के सुष्ठु चारित्रिक सौन्दर्य को दर्शाया गया है। इस का इतिवृत्त काल्पनिक है। ऐतिहासिक सत्य नहीं है, किन्तु फिर भी यह एकांकी अपने मनोवैज्ञानिक संघर्षों के सूक्ष्म चित्रण के कारण सफल तथा महत्वपूर्ण है। गौरी की कैद में बन्द पृथवीराज की मानसिक स्थिति का विश्लेषण और सांस्कृतिक पृष्टभूमि मिलती है। चरित्र सौन्दर्य के साथ साथ इस मे ऊंची कल्पना और काव्यत्मकता वर्तमान है।

" दीपदान " में पन्नादाई के अमर बलिदान का अंकन हुआ है। कुंवर उदयसिंह की रक्षा करने केलिए पन्नादाई ने अपने हृदय के टुकडे को बनवीर की तलवार के सम्मुख रख दिया है। पन्ना की स्वामिभक्ति, वीरता तथा उत्सर्ग भावना का मर्मस्पर्शी एवं मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है।

" भाग्य नक्षत्र " में वह घटना अंकित है जिस में पृथवीराज चौहान के विवाह पर्व युद्ध - पर्व के रूप में परिवर्तित हो जाता है। एकांकी का आरंभ उल्लासमय एवं आनंददायक वातावरण में होता है। पृथवीराज उस समारोह की कल्पना इस प्रकार करता है --- कल उषाकाल में ही यह पर्व मनाया जाये। संयोगिता उषा बन कर विविध रंग के बादलों की तरह वस्त्र धारण करे। लालिमा की तरह अंगराग से उसका शरीर चर्चित हो। शुक्र तारे की भांति उस के मस्तक पर हीरक-ज्योति हो और उस के सामने समीर की भांति सामन्तों की पंक्ति बढ़ती चली जाए। पक्षियों की तरह चारण उस का यशोगान करें और वह स्वयं सूर्य की तरह उस के समीप उदित हो कर उस की मंगल श्री में विभोर हो उठें।

लेकिन यह साकार नहीं होती । सूचना मिलती है कि गोरी अपरिमित सैनिक बल लेकर आक्रमण करने आ रहा है । युद्ध के इस गर्जन से विवाह पर्व का वातावरण बदल जाता है । पृथ्वीराज को यह ज्ञात होता है कि वह विलासी बन कर इन्द्र के नन्दन कानन में शयन करता रहा और उस के सामन्तों की वीरता प्रतिहिंसा में परिणत होती रही है । महारानी संयोगिता मंगल तिलक कर के कहती है --- "आप इस देश के वीर पुरुष हैं । भाग्य नक्षत्र हैं । भाग्य नक्षत्र, जिस का कभी अस्त न हो जिस की प्रत्येक किरण युद्ध भैरवी को निमन्त्रण दे । " इस में राजपूतों के जीवन की सजीव झांकी प्रस्तुत की गई है । पृथ्वीराज और संयोगिता दोनों की चारित्रिक रेखाएं स्पष्ट रूप से अंकित की गई हैं ।

"कृपाण की धार" में विलासी रामगुप्त के चरित्र का अंकन हुआ है जो गुप्त वंश में कलंक के रूप में पैदा हुआ है । मधुसेवा में लीन रामगुप्त को उसी गलत रास्ते से ले जाने वाले महामात्य की राजनीति सहायक हुई । शिविर को चारों ओर से घेर कर शकराज सन्धि की सूचना यों भेजता है कि महादेवी ध्रुवस्वामिनी को उपहार के रूप में भेज दें । यह सुनकर रामगुप्त क्रोध की ज्वाला में नहीं जलता । उस में अपमान से जलकर कृपाण की धार पर जाने का साहस नहीं है। वह मधु की धार में डूबता है । वंशी ध्वनि की धार में डूबता है । कृपाण की धार में नहीं । महामात्य की सलाह को अमूल्य मान-कर ध्रुवस्वामिनी को शत्रु के पास उपहार के रूप में भेजना ही चाहता है । क्षत्राणी ध्रुवस्वामिनी की ओजस्विनी वाणी भी उसे सचेत करने में असमर्थ होती है। ध्रुवस्वामिनी का करुण विलाप उसे ठीक मार्ग पर ला ही सका । रामगुप्त का छोटा भाई, चन्द्रगुप्त इस अपमान का बदला लेने का प्रण करता है । वह भी स्त्री वेश में महादेवी के साथ जाना चाहता है। उसकी वीरोचित कर्तव्य बुद्धि से भी रामगुप्त की आँखें नहीं खुलती । उन के चले जाने के उपरान्त वह पुन: मधु सेवन में डूब जाता है । रामगुप्त की कायरता, विलासप्रियता तथा अविवेक - बुद्धि इस एकांकी में उभारी गयी हैं । उस के विलासी चरित्र के अनुरूप वातावरण की सृष्टि की गई है ।

" रात का रहस्य " एकांकी में मगध के सम्राट बिम्बसार के जीवन के अंतिम दिनों की कथा वर्णित है । अपनी माता लिच्छवी कुमारी की शिक्षा के कारण अजात शत्रु विद्रोही और उद्दण्ड बना और सिंहासन पर अधिकार स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील रहा तो गृह कलह और आन्तरिक संघर्ष को मिटाने के लिए बिम्बसार ने सिंहासन त्याग दिया है । अपनी बड़ी रानी वासवी के साथ एक कुटी में रहने लगे + पर उस कुटी पर भी अजात शत्रु ने नियन्त्रण लगा दिया । बिम्बसार का भोजन भी बन्द कर दिया । इतना होने पर भी बिम्बसार का पुत्र-प्रेम वैसा ही बना रहता है । उन पर राजद्रोह का अभियोग लगाने के लिए षड्यन्त्र रचा जाता है । एक नारी से अभिनय कराया जाता है कि बौद्धकर्मविलंबिनी होने के कारण उस की संपत्ति का अपहरण किया गया है और राज्य की यह घोषणा हुई कि उस की सहायता कोई न करे । उसका बच्चा भूखों मर रहा था । बिम्बसार नारी के इस अभिनय को सत्य समझ कर द्रवित होते हैं और वासवी को आदेश देते हैं कि वह अपने हाथ के स्वर्ण कंकण उस नारी को दे । उस नारी के प्रस्थान के पश्चात् अजातशत्रु का सहायक समुद्रगुप्त राजाज्ञा सुनाता है कि राज द्रोह के अभियोग पर बिम्बसार को प्राणदण्ड दिया गया है । बिम्बसार और वासवी दण्ड भोगने के लिए संसिद्ध होते हैं कि समुद्रगुप्त यह आनंद संवाद सुनाता है कि अजात शत्रु को पुत्र हुआ है । उसे सुनते ही आनंदातिरेक में बिम्बसार प्राण छोड़ देते हैं । अजात शत्रु अपने अपराध को जानकर क्षमा याचना करने आता है । लेकिन तब तक बिम्बसार की जीवन लीला समाप्त होती है । अजातशत्रु का मन ग्लानि से भर जाता है । उस रात का यही रहस्य है जिस ने अपने अंधकार में अजात शत्रु के जीवन के वास्तविक सत्य को ढक लिया । इस एकांकी में बिम्बसार के पुत्र वात्सल्य, प्रजा वत्सलता और अहिंसा धर्म पर प्रकाश डाला गया है ।

" मर्यादा की वेदी पर " एकांकी में भारत देश पर सिकन्दर के आक्रमण की कहानी चित्रित की गई है । इस में ऐतिहासिक सत्य की रक्षा की गई है और साथ ही साथ भारत वीरों के धैर्य, साहस, आत्माभिमान और देश-प्रेम के गुणों पर प्रकाश डाला गया है । भारत देश वीर प्रसू है । यहां पौरव जैसे वीर पराक्रमशाली महापुरुष उत्पन्न हुए थे जिन की वीरता के सामने सिकन्दर जैसे विजेता ने भी अपना मस्तक झुका दिया है । लेकिन इस देश में आम्भि जैसे सम्राट भी थे जो अपने गृह कलहों के कारण विदेशी शत्रु को निमन्त्रण देकर सम्मानित करते थे । आम्भी और पौरव के चरित्र भारत के उस युग के दो प्रकार के लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

इन दोनों के चरित्र वैषाम्य के द्वारा एकांकीकार वर्मा जी ने चरित्रांकन सुन्दर तथा आकर्षक ढंग से किया है । जहां आम्भि ने अपने देश के द्वार को खोल कर विदेशी शत्रु सिकन्दर का आह्वान किया वहां पौरव ने अपनी अपूर्व शक्ति तथा वीरता के साथ युद्ध किया । बन्दी होने पर भी उस ने अपना सिर सिकन्दर के सामने नहीं झुकाया और वीर सिकन्दर से यह आशा की कि उस के साथ वैसा ही व्यवहार किया जाय जैसा किसी राजा के साथ किया जाता है । वीर पौरव के साथ सिकन्दर ने अपनी मित्रता स्थापित की थी ।

पौरव से भी महत्वपूर्ण व्यक्तित्व रखनेवाली वीर नारी मैरवी की कल्पना इस एकांकी में की गई है जो भारतीय नारी का प्रतिनिधित्व करती है । उस ने अपने दुर्ग की रक्षा करने में कोई कसर नहीं रखी थी । सिकन्दर के सैनिक उसे बन्दी बना देते हैं । लेकिन वह अपनी तलवार को त्यागने के लिए संसिद्ध नहीं होती । कायर आम्भि को धिक्कार कर उस से लड़ना चाहती है । सिकन्दर के साथ पौरव की मित्रता की भावना को भी धिक्कारती है । उस के शब्दों में कितनी ही सच्चाई भरी हुई है --- " यह हमारे देश की मर्यादा नहीं है । पौरव, यह धोखा है । यह प्रवंचना है । "
वह अपनी अटल कामना को प्रकट करती है --- " मैं अकेली ही अपने देश के लिए युद्ध करूंगी । आम्भि और पौरव सिकन्दर के आक्रमण को आगे बढ़ाने के लिए रथ के दो चक्र होंगे । मैं शिला बनकर उसे रोकूंगी । अवश्य रोकूंगी । पौरव ! पौरव ! यह हमारे देश की मर्यादा नहीं है । "
उतने सैनिकों से जीतना असंभव है और वह अपने को कन्दिनी बनाना भी नहीं चाहती । साथ ही साथ देश को बन्दी होता देख भी नहीं सकती । अतः उस ने अपने रक्त को ही देश की मर्यादा की वेदी पर चढ़ा दिया है ।

मैरवी सचमुच मैरवी के रूप में दर्शकों के सम्मुख प्रस्तुत की गई है । इस प्रकार इस एकांकी में भारत के तीन प्रतिनिधि ६ चरित्रों का अंकन किया गया है । एक प्रकार के वे लोग हैं जो आम्भि के समान देश के शत्रु बनते हैं । दूसरे प्रकार के वे वीर लोग भी हैं जो पौरव के समान अपनी मर्यादा की रक्षा करते है । तीसरे प्रकार के वे लोग हैं जो मैरवी के समान देश की मर्यादा की वेदी पर अपनी आहुति देते हैं । वर्तमान भारत देश में भी इन तीनों प्रवृत्तियों से युक्त लोग विद्यमान है । एकांकीकार परोक्ष ढंग से आदर्श को देशवासियों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं कि सभी देशवासी पौरव और मैरवी बनें । सिकन्दर की वाणी से एकांकीकार ने भारत के वीर पुत्रों की प्रशंसा की है और साथ ही साथ देश के बलहीन पक्ष का भी उल्लेख किया है । -------

" इस देश के वीरों ने शक्ति की पूजा तो की किन्तु वे अपने देश की पूजा नहीं कर सके । एक एक नगर , एक एक वीर फौलाद का टुकड़ा है । लेकिन अलग अलग टुकड़े एक श्रृंखला नहीं बना सके । वे एक दूसरे के हृदय [illegible] नहीं जुड़ सके ।

इस प्रकार इन के ऐतिहासिक एकांकियों में आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की गई है जो राष्ट्र के नवयुवकों के चरित्र निर्माण का पथ निर्देशित करता है । पौरव, चन्द्रगुप्त, शिवाजी, समुद्रगुप्त, विक्रमादित्य, अशोक, दुर्गावती, कृष्णा कुमारी आदि महान ऐतिहासिक चरित्रों का अंकन मनोवैज्ञानिक ढंग से किया गया है । आदर्श की ओर संकेत के होने पर भी नाटकों की पृष्ठ भूमि पर अपनी पूर्ण स्वाभाविकता के साथ सजीव बन पड़े हैं । डा. वर्मा के ऐतिहासिक नाटकों का शिल्प विधान भी मौलिक है । इसी कारण से उन के ऐतिहासिक एकांकी अधिक प्रौढ़ गंभीर तथा प्रभावोत्पादक बन पड़े हैं ।

नाटकीयता में कोई क्षति नहीं हुई । इन नाटकों के [illegible]

अब हम एकांकी के तत्वों को लेते हुए डा. वर्मा के एकांकियों का मूल्यांकन करेंगे जिस में उन के एकांकियों की शिल्पगत [illegible] विशेषताएं स्पष्ट हो जाएंगी ।

यद्यपि डा. वर्मा पाश्चात्य एकांकी नाट्य शिल्प से [illegible] परिचित ही नहीं प्रभावित भी हैं तथापि उन्होंने पाश्चात्य नाटकीय कुशलता का अनुकरण नहीं किया । उन्हीं के शब्दों में " यद्यपि उन से मैं ने विशेष ग्रहण नहीं किया । फिर भी उन की नाटकीय कुशलता से परिचित होकर उस के अनुरूप सोचने और चरित्र निर्माण करने का प्रयत्न किया है । " इब्सन द्वारा प्रवर्तित स्वाभाविकतावाद इन के नाटकों में भी दर्शन देती है । " कला जीवन के लिए " स्कूल के पक्षपाती होने के कारण इन के नाटकों में चाहे जितना भी स्वाभाविकता का चित्रण किया गया हो, किन्तु स्वाभाविकता के साथ साथ या तो आदर्श की स्थापना की गई है या आदर्श की ओर इंगित अवश्य किया गया है । उन के नाटकों से एक ओर मनोरंजन प्राप्त होता है तो दूसरी ओर जीवन को ऊंचा उठाने का भी उपदेश मिलता है । सत्यं और सुंदरम् के साथ साथ शिवं तत्व का अधिक महत्व उन्होंने दिया है । वे जीवन को एक पवित्र विभूति मानते हैं । और इसका उपयोग भी उस रूप में करना चाहते हैं जैसे प्रभा की विभूति । वे भारतीय संस्कृति के पुजारी हैं और उसी आस्था के फलस्वरूप जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण निर्मित हुआ है । वे इतने आशावादी कलाकार हैं कि पग पग पर ठोकर खाने पर भी पुनः चलने की शक्ति उन में वैसे ही बनी रहती है ।

इन के उत्साह में कोई अंतर नहीं पड़ता। इन की प्रवृत्ति आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर है। उन के एकांकियों में गंभीरता है और उन की साहित्यिक सुरुचि पायी जाती है। वास्तविकतावादी रचनाओं के सृजन के पक्षपाती होते हुए भी ऐसी वास्तविकता से उन्हें शिकायत है जो कुत्सित वातावरण का सृजन कर सौन्दर्य को नष्टभ्रष्ट करती है और पुनर्निर्माण के लिए कोई मार्ग निर्धारित नहीं करती। इसी दृष्टिकोण के फलस्वरूप कथावस्तु का चयन जीवन के अंदर से ही करते हैं। कथावस्तु के लिए प्रतिभा से पूर्ण नाटककार को अपने जीवन के अनुभवों से बाहर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती ह। यदि अनुभवों के बाहर से वस्तु चयन किया गया है तो उस में वह स्वाभाविकता और मार्मिकता नहीं रहती जो अनुभवों के आधार पर सृजित कथावस्तु में पायी जाती है। डा. वर्मा ने अपने समकालीन प्रगतिशील लेखकों से अपना मत भेद प्रकट किया है। प्रगतिशील लेखकों की दृष्टि केवल कुरूपता की ओर जाती है। ये लोग अश्लीलता के किनारे बैठकर साहित्य के नाम पर अपनी वासनाओं का नृत्य देखना चाहते हैं। जीवन के कुरूप पहलुओं के चित्रण से साहित्य की चारुशीलता नष्ट भ्रष्ट हो जाती है। इस में कोई मत भेद नहीं कि वास्तविकता नाटक की आधार शिला है और होनी भी चाहिए। पर उस के लिए जीवन की ऐसी घटनाएं चुननी चाहिए जो हृदय की सहानुभूति प्राप्त कर सकें या हमारी रागात्मक प्रवृत्ति में कुछ चेतना ला सकें। नाट्य जगत के प्रमुख नेता इब्सन सदैव अपनी कला को यथार्थ की अनुचरी बनाता था जैसे किसी वीर पुरुष के पीछे एक सजी हुई नववधु चली जा रही है। अतः चरित्र के विश्लेषण या स्थिति के विस्तार में मनोविज्ञान का प्रधान स्थान है पर कला का निर्वासन और सुरुचि का बहिष्कार वांछनीय नहीं है। कलात्मक विन्यास भी उस हद तक अपेक्षित है जहां वह जीवन की वस्तु स्थितियों को कुरुचिपूर्ण और शुष्क होने से सुरक्षित रखता है। केवल मनोरंजन और हास्य के लिए अलंकारमय वार्तालाप लिखना व्यर्थ है जिस से कथानक की प्रगति में न सहायक होते और न उन से चरित्र चित्रण पूर्ण होता है। डा. वर्मा मानव हृदय की शाश्वत अनुभूतियों अथवा प्रश्नों का चित्रण करते हैं। मानव हृदय की अभिव्यक्तियों को सिद्धान्तवाद के बोझ से दबा देना उन्हें इष्ट नहीं। इसी कारण से प्रगतिशील लेखकों से उन की दूसरी शिकायत यह रही कि वे लोग मनुष्य को भूल कर वर्ग के पीछे पड़ जाते हैं।

डा. वर्मा ने जीवन के अनेक पहलुओं का चित्रण किया है। इन्होंने राजनीतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, पौराणिक --- प्रायः सभी विषयों पर लेखनी चलायी है।

वे भारतीय संस्कृति के उपासक है उन के नाटकों में उनका सांस्कृतिक दृष्टि-कोण सर्वोपरी है । कथा ही ऐतिहासिक नाटक, कथाही राजनीतिक कथा ही सामाजिक सब प्रकार के नाटकों मेंभारतीय संस्कृति और गौरव का ध्यान रखा गया है । इन के चरित्रों में भिन्नता है, इन की भावनाएं नवीन हैं, कथानक भी मौलिक हैं । हां, इतना तो अवश्य है कि कुछ नाटकों मे भाव साम्य तथा शिल्प संबधी साम्य दृष्टिगोचर होता है । उदाहरण के रूप में हम ऐतिहासिक एकांकी ले सकते हैं । 'समुद्रगुप्त पराक्रमांक' और 'विक्रमादित्य' के कथानक की तुलना करने पर मालूम पड़ता है कि न केवल कथानक के विकास की रेखाओं में ही समानता है अपितु चरमसीमा की अविस्मरणीय परिसमाप्ति में भी साम्य है । इतना ही नहीं, दोनों राजाओं के चरित्र चित्रण में वेही उदात्त गुणों का समावेश है जो एक भारतीय सम्राट में प्राप्त होते है । दोनों नाटक ऐतिहासिक हैं । सम्राटों के व्यक्तित्व तथा न्यायप्रियता का स्पष्टीकरण दोनों में हुआ है । उत्सुक्ता को अंत तक बनाये रखने की चेष्टा दोनों में की गई है । पर दोनों में से 'विक्रमादित्य' अधिक श्रेष्ट और सफल एकांकी है । क्यों कि उस में 'समुद्रगुप्त पराक्रमांक' से उत्सुकता की वृद्धि और तीव्रता अधिक है । 'श्री विक्रमादित्य' में पाठकों को लेश मात्र भी शंका नहीं उठती कि स्त्री वेषधारिणी पुरुष है । किन्तु 'समुद्रगुप्त पराक्रमांक' में पहले से ही धवल कीर्ति के प्रति शंका दृष्टि उत्पन्न होती है और एकांकी की समाप्ति का बोध भी कुछ कुछ हो चलता है । 'श्री विक्रमादित्य' में पाठकों या दर्शकों की ऊहात्मक शक्ति को पराजित होना पड़ता है । वे अंतिम परिणाम का अनुमान भी नहीं कर पाते । इस दृष्टिकोण से विक्रमादित्य समुद्रगुप्त से श्रेष्टव सफल ठहरता है । कलात्मक विन्यास में इस तरह के साम्य का दृष्टिगोचर होना स्वाभाविक है । एक ओर वे भारतीय संस्कृति और सभ्यता के प्रतिपादक कलाकार हैं दूसरी ओर भारतीय इतिहास के ऐसे ही कथानकों का चयन उन्होंने किया है जो चरित्र के महत्वपूर्ण आदर्श को उपस्थित करने में समर्थ हो । उन का सदैव विचार यही रहा कि हमारे देश के नवयुवकों के सम्मुख ऐसे आदर्श चरित्र प्रस्तुत कियाजाय जिन से अनुप्राणित होकर वे अपना चरित्र निर्माण कर सकें । " शिवाजी " नाटक की भूमिका में उन्होंने अपने इस दृष्टिकोण की चर्चा विस्तारपूर्वक की है । (१) इस तरह दृष्टिकोण की एकता और साम्य

---

(१) इस नाटक के द्वारा हम अपने प्राचीन गौरव को एक बार फिर लोगों के सामने लाना चाहते हैं । महाराज शिवाजी के चरित्र में हमें अपने आदर्श को समझने की क्षमता प्राप्त होती है । उनका चरित्र हमारे अनुकरण की वस्तु है । जिन विषम परिस्थितियों से उठकर वीर शिवाजी ने अपने लिए एक स्वतंत्र राष्ट्र का निर्माण किया था, वैसी ही विषम परिस्थितियां आज भी किसी न किसी रूप में हमारे नवयुवकों के सामने है । ---- हमें विश्वास है, हमारे देश के नवयुवक इस पर आचरण करेंगे । शिवाजी -- पृ. १५.

संबंधी एकता के कारण नाटकों में साम्य लक्षित होता है । लेकिन पाठक या दर्शक नवीनता के आकांक्षी होते हैं । कलाकार की सृजन कृतियाँ वैसे ही रम्य व नवीन रहें जैसे सुन्दर प्राकृतिक विभूतियां । सुवर्ण प्रभात जो परसों हुआ या वही कल भी हुआ, आज भी उसका आगमन हुआ और पुनः कल उस के दर्शन होंगे । वही रागरंजित सन्ध्या पश्चिमाकाश की शोभा को बढ़ाती है जिस ने कल भी रागरंजित किया और परसों भी । लेकिन मानव प्रभात व सन्ध्या की प्रतीक्षा करने में कभी ऊबता नहीं । प्रभात वही है और नहीं भी है । सन्ध्या वही है और नहीं भी है । उस में नूतनता भी है और प्राचीनता भी । कलाकार की कृति भी उसी तरह नूतनता की पोषिका होना अपेक्षित है चाहे उस में दृष्टिकोण का एक ही लक्ष्य क्यों न हो, चाहे शिल्प विन्यास का एक ही गम्य क्यों न हो । नहीं तो साम्य के कारण एक प्रकार की उकताहट का अनुभव पाठक या दर्शक करते हैं ।

डा. वर्मा की सृजन कला की सब से प्रमुख विशिष्टता है-उनकी नाटकीयता। उन में नाटकीय क्षण को पकड़ने की सहज प्रतिभाजन्य प्रवृत्ति है । हम चाहें किसी भी एकांकी को लें, उस में जीवन के एक ऐसे पहलू का चित्रण मिलता है जो आन्तरिक और बाह्य संघर्ष से युक्त है । चरमसीमा तक अर्थात् नाटकीय स्थिति तक कथावस्तु इस तरह विकसित होती है कि अंतिम वाक्य तक कौतूहल की वृद्धि होती जाती है। दर्शकों की उत्सुकता की आनन्द में, परिसमाप्ति तभी होती है जब कथा वस्तु चरमसीमा तक पहुंचकर समाप्त हो जाती है। रंगमंच की आवश्यकताओं के प्रति विशेष ध्यान अभिनेयता के प्रति जागरूकता, चरित्र चित्रण का स्फुट रेखाओं में अंकन और संवादों की क्षिप्रगति - नाटकीयता को सुरक्षित रखते हैं । अभिनयात्मक तत्व वर्मा जी के नाटकों में अधिक स्थानों पर मिलता है । लेकिन एक-दो एकांकी ऐसे भी हैं जिन में अभिनयात्मक तत्व की अपेक्षा वर्णनात्मकता का पुट अधिक हो गया है । इस का कारण यह है कि डा. वर्मा संकलन त्रय का निर्वाह एकांकी में आवश्यक मानते हैं । उस में भी स्थान संकलन को अत्यन्त आवश्यक समझते हैं । अतः उन के एकांकियों में दृश्यों का विभाजन नहीं मिलता । प्रायः एक ही दृश्य में कथानक का विन्यास होता है । पेचीदी कथा वस्तु को अंकित करने के लिए एक से अधिक दृश्यों की आवश्यकता होती है । जब डा. वर्मा ने अपने कला संबंधी सिद्धान्त के अनुसार ऐसी जटिल कथावस्तु का अंकन एक ही दृश्य में करने का प्रयास किया है तब उस एकांकी की अभिनयात्मकता कुण्ठित हुई है और वर्णनात्मकता का पुट आ गया है । उन के " एक्ट्रेस " एकांकी में यही बात हुई है । प्रभा कुमारी और कमलाकुमारी के कथोपकथन वर्णनात्मकता लिए हुए हैं ।

कमलाकुमारी वाकपटु है । बात करने के अवकाश को कभी हाथ से नहीं जाने देती । इधर प्रभा कुमारी अपनी पूर्व कथा का विवरण बातों के सिलसिले में कह जाती है । " एक्ट्रेस " की कथा जटिल है । उस जटिलता को सुलझाने में वर्णनात्मक तत्त्व का समावेश हो गया है । वह परिस्थिति की मांग है । (०) उन के " कलाकार का सत्य " एकांकी में भी अभिनयात्मक तत्त्व का अभाव है । इस में अखिल नामक यश: कांक्षी कवि का चित्रण है जिसे यश की प्राप्ति नहीं हुई । वह अपने सहयोगी कवि एकान्त से अपनी मानसिक वेदना को प्रकट करता है और एकान्त उसे आश्वासन देता है कि उस के अमूल्य ग्रन्थों का प्रकाशन होगा और वांछित यश की प्राप्ति भी होगी । अखिल और एकान्त के ये बातलाप लंबे हैं और उन में कोई बात कुतूहलता की नहीं है । कवि लोगों की स्थिति का केवल वर्णन मात्र किया गया है । यदि कवियों की उस स्थिति का रूप दूसरे ढंग से प्रस्तुत किया होता तो एकांकी में अभिनयात्मकता का समावेश होता । इस तरह इन के कुछ एकांकी वर्णनात्मक हो गये हैं । लेकिन उन की संख्या कम हैं ।

कथोपकथनों से नाटक में प्रगति उत्पन्न होती है । उन में घटनाओं के गूढ़ से गूढ़ आरोहों और अवरोहों का ज्ञान भी निहित रहता है । डा. वर्मा ने परिस्थिति और पात्रों के अनुकूल कथोपकथन रचे हैं जिन से नाटकों में प्रगति उत्पन्न हुई है । एक पात्र के वचनों से दूसरे पात्र के वचनों की कड़ी जुड़ी रहती है । एक के कथन से दूसरे का कथन प्रारंभ होता है । कथोपकथनों के प्रवाह में इसी कारण से वेग भी उत्पन्न होता है और वे स्वाभाविकता और मार्मिकता से युक्त रहते है । डा. वर्मा के एकांकियों के कथोपकथन आवश्यकतानुसार संक्षिप्त हैं, मर्मस्पर्शी है, चरित्रगत विशेषताओं को प्रकट करने में सक्षम हैं और है स्वाभाविक । उन के कथोपकथनों से वास्तविक जीवन का भ्रम होने लगता है और वास्तविक जीवन के वातावरण की सृष्टि हो जाती है । स्वाभाविकता के लिए वे वास्तविक जीवन के कथोपकथनों को ज्यों का त्यों पात्रों के मुंह से नहीं कहलवाते । कलात्मक ढंग से कथोपकथनों की कल्पना करते है जिस में स्वाभाविकता का भास होता है । उदाहरण के रूप में " आंखों का आकाश " एकांकी को ले सकते है । अविनाश और सुलेखा के कथोपकथन कथा-वस्तु को गतिप्रदान करते हुए क्षीण स्थिति तक पहुंचते हैं और उस चरमसीमा की ऊंचाई से पुन: साधारण समस्थिति में पहुंचकर समाप्त होते हैं । अविनाश के कथन के सूत्र से सुलेखा के कथन का प्रारंभ होता है और सेलेखा के कथन की कड़ी को पकड़ कर अविनाश का कथन चलता है । इस तरह से कथोपकथन एक ही सूत्र में पिरोये गये हैं । एकांकी का आरंभ अविनाश के कवि पंत के प्रति कविता-पठन से होता है ।

(०) डॉ. रामकुमार वर्मा — विचार दर्शन — १२२ - १२३

" तुम्हारी आंखों का आकाश
सरल आंखों का नीलाकाश
खोया मेरा खग-अनजान । "

कविता की अंतिम पंक्ति को लेकर सुलेखा पूछती है कि " क्या खो गया जी ? " अविनाश उत्तर देता है -- " कवि कहता है कि मेरा मन रूपी पक्षी खो गया । " इस से दूसरा प्रश्न सुलेखा के मन में यह उठता है कि " पक्षी खो गया कहां ? " अविनाश को उत्तर देना ही पड़ता है ---- " आंखों के नीले आकाश में । " इस पर सुलेखा संदेह करती है कि आंखों में भी नीलाकाश है ? " सुलेखा के संदेह का निवारण करने के लिए अविनाश है न ? वह इतनी सुन्दर और व्यापक है कि उस में मन रूपी पक्षी खो गया । " इस भांति कथोपकथनों की श्रृंखला लंबी होती जाती है। नव विवाहित युगल होने के कारण एक दूसरे के स्वभाव की प्रशंसा करने लगते है। वे सोचते हैं कि उन के बीच विवाद और संघर्ष उत्पन्न नहीं हुआ । इस का कारण दोनों का स्वभाव ही है । उन्हीं बातों के सिलसिले में अविनाश पूछता है --- " क्यों सुलेखा, क्या हम और तुम एक दूसरे से कभी रुष्ट होसकते हैं ? " सुलेखा शीघ्र ही उत्तर देती है ---- " कभी नहीं । " अविनाश पूछता है --- " चाहे मेरी कोई बात कभी तुम्हें बुरी भी न लगे ? " इस के लिए सुलेखा उदाहरण प्रस्तुत करती हुई कहती है कि वह समय जब कि वह मोज़ा बुन रही है, कविता पढ़ने का समय नहीं है । किन्तु फिर भी उसने आपत्ति नहीं की । इस पर अविनाश करता है ---- " आपत्ति की बात नहीं है । बात है कविता सुनने की । यह भी तो समझना चाहिए कि जब मैं कविता पढ़ रहा हूं तो इधर उधर उस समय कोई काम हाथ में लेना ही नहीं चाहिए । इधर मैं कविता पढ़ रहा था और उधर तुम मोज़ा बुनने बैठ गई । " इस तरह देखते देखते कथोपकथनों के सिलसिले में ही बात हद से बढ़ जाती है और दोनों एक दूसरे की निंदा करते हुए विवाद करना प्रारंभ करते हैं । यह विवाद भी तीव्रता को प्राप्त कर बहुत ऊंचाई तक चलता है । व्यंग्य की उक्तियां चलती हैं । उग्र वचन बोले जाते हैं । सुलेखा बरस पड़ती है --

" पति --- पति ---- पति --- पति क्या कोई भूत है जो हमेशा सिर पर बैठकर बोले ? पति -- पति सुनते -- सुनते थक गई ? " अंत में बात यहां तक पहुंच जाती है कि सुलेखा आत्मा हत्या करने का निश्चय कर लेती है । और अविनाश भी यही निर्णय करता है । लेकिन दोनों पुनः वापस आ जाते है । इस के पश्चात् अविनाश को छाती में दर्द उठा है तो कराहने लगता है । उसे देखकर सुलेखा दवा लगाने के लिए आगे बढ़ती है कि फूल दान से ठोकर खाकर गिर पड़ती है ।

एक दूसरे की पीड़ा का अनुभव करते हैं और एक दूसरे से क्षमा-याचना करते हैं। आपस में मिल जाते हैं। सुलेखा प्रार्थना करती है कि " आंखों के आकाश " वाली कविता सुनावे और अविनाश भी विनती करता है कि कविता सुनाते समय उस के लिए मोज़ा बुनती रहे। एकांकी की समाप्ति " आंखों का आकाश " कविता से होती है।

इस प्रकार इस एकांकी में कथोपकथनों की श्रृंखला इस तरह बनायी गई कि प्रारंभ से अंत तक उसी के आधार पर वस्तु में गति उत्पन्न हुई है। वास्तव में इस में कथा वस्तु है ही क्या ? गंभीर विषय नहीं है। एक कोण से नव दम्पति की मानसिक स्थिति का अध्ययन पस्तुत किया गया है। उन के विवाद के लिए कोई गंभीर या बड़ी घटना नहीं घटी। बातों में बातों में झगड़ा हुआ और उसी तरह उस का अंत भी हुआ है। इस तरह के मन-मुटाव के लिए विवाह के पश्चात् के प्रारंभिक दिनों में अवकाश रहता है। लेकिन वह विवाद भी स्थायी रूप धारण नहीं करता। क्यों कि झगड़े के मूल कारण तो नहीं के बराबर होते हैं। सुलेखा के विवाद की कौन-सी बलवती घटना घटित हुई है ? मोज़ा बुनते वक्त पति का कविता-पाठ सुलेखा को अच्छा नहीं लगा और कविता सुनाते समय पत्नी का केवल मोज़ा बुनना अब अविनाश को बुरा लगा। इतनी छोटी सी बात को एकांकी का रूप कैसे दिया जा सकता है ? कथोपकथनों की ही यह विशिष्टता है कि उस छोटी सी बात का न विस्तार, गतियुक्त प्रवाह के रूप से बदल दे। कथोपकथनों की कल्पना पात्रानुकूल ही की जाती है पर उस के लिए यह पूर्णतः वांछित है कि उन से कथा वस्तु का प्रवाह तीव्र गति को पकड़े। " आंखों का आकाश " के कथोपकथन इस बात के लिए अच्छे उदाहरण है। यदि कथोपकथनों में व्यंजना शक्ति न रहती तो एकांकी का यह प्रभाव उत्पन्न नहीं हुआ होता। एकांकी की समाप्ति चरमसीमा पर नहीं --- आरंभ की समस्थिति में हुई है। दम्पत्ति के बीच पुनः संवेदना उत्पन्न करने के लिए छाती में पीड़ा और सिर दर्द की कल्पना की गई है। डा. वर्मा ने अपनी उसी कलात्मक प्रक्रिया का उपयोग यहां भी किया है। वे दो एक मोटी लकीरों को खींचकर चित्रांकन कर लेते हैं। यहां भी वही बात हुई है। पहली मोटी लकीर से कोई शिकायत नहीं। लेकिन दूसरी लकीर -- सिरदर्द अथवा ठोकर खाकर गिर पड़ना --- पुनः मिलन के लिए पर्याप्त नहीं। यों तो झगड़े के होने में गंभीर विषय की आवश्यकता नहीं रहती पर अब पुनः मिलन के लिए गंभीर घटना अपेक्षित होती है। नहीं तो आपसी विवाद स्थायित्व को प्राप्त करने की ओर ही अग्रसर होता है। ऐसी स्थिति में दूसरे दृश्य की भी कल्पना करनी पड़ती है जिस में अविनाश या सुलेखा बीमार पड़ते हैं अथवा कोई बलवती घटना घटती है जिस में पुनः मिलन के लिए पर्याप्त संवेदना हो।

हां, एक ही दृश्य में छोटी सी कथावस्तु को लेकर सशक्त कथोपकथनों के द्वारा प्रभावोत्पादकता की सृष्टि करना सुलभ व नहीं है ।

इस एकांकी के कथोपकथन वास्तविकता लिए हुए हैं । जहां विवाद तीव्रता को प्राप्त हुआ वहां कथोपकथन भी व्यंग्यमयी और संक्षिप्त हैं । प्रारंभिक कथोपकथन जिन में दम्पत्ति एक दूसरे की प्रशंसा करते है, भावुक और कवित्व मय हैं और विवाद वाले कथोपकथनों से विस्तृत है । दोनों प्रकार के उदाहरण क्रमशः इस प्रकार हैं -----

पहला उदाहरण :--

अविनाश :-- देखो, सुलेखा ! तुम मुझे बहुत अपमानित कर चुकीं । अपमान सहते-सहते मैं अंतिम सीमा तक पहुंच गया हूं ।

सुलेखा :--- (मुंह फुलाकर) अंतिम सीमा । बहुत धमकी देती हो। देख चुकी ऐसी धमकी ।

अविनाश :-- कैसी धमकी ? क्या तुम मुझे इतना कमज़ोर समझती हो कि मैं कुछ कर नहीं सकता ? मैं तो वह कर सकता हूं कि ----

सुलेखा :-- क्या कर सकते हो ? आज तक कुछ कर के दिखाया होता ।

अविनाश :-- क्या देखना चाहती हो ? मेरी मौत ?

सुलेखा :-- उसे देख कर मुझे क्या मिल जायेगा ?

अविनाश :-- मिले, चाहे न मिले । मेरे न रहने से तुम सुखी तो हो जाओगी ।

सुलेखा :-- हो चुकी सुखी ! मेरे भाग्य में सुख कहां ?

दूसरा उदाहरण :--

अविनाश :-- मैं फिर कहता हूं, तुम कविता बहुत अच्छी लिख सकती हो ।

सुलेखा ! प्रयत्न कर के देखो । तब प्रत्येक कवि सम्मेलन में मैं तुम्हारे साथ जाकर कितना गौरवान्वित होऊंगा । लोग मेरी ओर संकेत कर के कहेंगे कि ये कवयित्री सुलेखा के पति हैं । सुलेखा, तुम मेरे सौभाग्य का अनुमान नहीं कर सकतीं । मैं तुम्हारी कविता की नोट-बुक अपने ही पास रखूंगा और जब तुम कविता पढ़ते समय संकेत से अपनी नोट-बुक मुझ से मांगोगी तब मैं अपने चारों ओर देखकर लोगों की आंखों से आंखें मिलाकर मौन भाषा में कहूंगा कि तुम लोग मेरी ही पत्नी की कविता सुनने के लिए इतने उत्सुक हो और तब मैं तुम्हारी कविता की नोट-बुक बढ़ा दूंगा । उस समय तुम अनुमान कर सकोगी कि वसंत की कोकिल के स्वर से उतना सुखी नहीं होगा जितना मैं तुम्हारी कविता सुनकर ।

प्राचीन नाट्य साहित्य में स्वगत कथन के लिए स्थान भले ही मिला हो, पर आधुनिक युग में स्वाभाविकता के आग्रह के कारण नाटकों में स्वगत कथनों का बहिष्कार सा हो गया है। जब बड़े नाटकों में ही स्वगत कथन अस्वाभाविक प्रतीत होते है तो एकांकी में उन के लिए क्या स्थान रह जाता है ? डा. वर्मा भी स्वगत कथन को नाटक में स्थान देने के पक्ष में नहीं हैं। (०) उन के एकांकियों में स्वगत कथनवाले प्रसंगों की सृष्टि नहीं की गई है। हां, एक आध स्थल अपवाद स्वरूप मिलते हैं। लेकिन उस प्रसंग की स्थिति तथा उपयुक्तता के अनुकूल स्वगत कथन की रचना की गई है। उदाहरण के रूप में उन के " एक तोले अफ़ीम की कीमत " एकांकी के नायक का स्वगत कथन ले सकते हैं। यह स्वगत कथन सचमुच बड़ा लंबा है जिस के कारण अस्वाभाविकता के पुट का आना संभव है। इस एकांकी में नायक आत्म हत्या करने जा रहा है। जो व्यक्ति ऐसा निर्णय कर लेता है उस के मानसिक संक्षोभ की तीव्रता का अनुमान लगा सकते हैं। जब नाटककार के लिए यह प्रकट करना आवश्यक होता है कि उस व्यक्ति की मानसिक स्थिति कैसी है तब उस को स्वगत कथन की कल्पना ही करनी पड़ती है। डा. वर्मा ने इस स्थान पर स्वगत कथन के साधन को ही ग्रहण किया है और वह स्वगत कथन अपने प्रसंग की तीव्रता के कारण लंबा भी बना है। ऐसे प्रसंगों पर अभिनय में स्वाभाविकता लावे और दर्शकों को यह अनुभव न होने दे कि वह स्वगत कथन को कह रहा है। डा. वर्मा के " राजा रानी सीता " में भी स्वगत कथन का प्रसंग है जहां सीता, रावण मन्दोदरी तथा दासियों के चले जाने पर अकेली रह जाती है। दुःख मग्ना सीता पूर्व बातों का स्मरण करती हुई वर्तमान स्थिति पर चिंतित होती है। जब तक हनुमान के द्वारा मुद्रिका नहीं दी जाती तब तक सीता की विचार-स्रवंति प्रवाहित होती है। यह प्रसंग भी परिस्थिति की उपयुक्तता पर रचित है। यहां स्वगत कथन के स्थान पर किसी और विधान का उपयोग भी कैसे किया जा सकता है ? डा. वर्मा के एकांकियों में ऐसे स्वगत कथनों की संख्या बहुत कम मिलती है। कथोपकथनों की भाषा के संबंध में डा. वर्मा के विचार प्रगतिशील हैं। इस में कोई संदेह नहीं है कि जिस वातावरण में जो पात्र सांस ले रहे हैं उस वातावरण के अनुरूप यदि भाषा न होगी तो पात्र अस्वाभाविक होजाते हैं और उन पात्रों के व्यक्तित्व के पीछे नाटककार की भाषा सुनाई पड़ती है। प्रख्यात नाटक कार इब्सन ने अपनी नाटक रचना के विषय में कहा है कि :-- I proceed from the individual, the stage setting, the dramatic ensemble all that comes naturally and causes me no worry once I feel sure of the individual in every aspect of his humanity. But I must penetrate to the last wrinkle of his soul.

पात्रों की आत्मा को सुरक्षित रखने के लिए नाटककार कोउस के मुंह से निसृत हर एक शब्द का ध्यान रखना होगा । जैसा उसका चरित्र होगा, और उस चरित्र का विकास जिन परिस्थितियों की विषमताओं के मध्य होगा, उन्हीं के अनुरूप उस की भाषा भी होगी । एक सेठ की भाषा में, एक नेता की भाषा में, एक ब्राह्मण की वाणी में और एक चमार की बोली में कितना अंतर रहता है --- यह बात किसी से छिपी हुई नहीं है । डा. वर्मा ने भी पात्रोचित भाषा का प्रयोग स्वाभाविकता लाने के उद्देश्य से किया है । उन की ऐतिहासिक रचनाओं में, हिन्दू सम्राटों से संबन्धित नाटकों की भाषा विशुद्ध हिन्दी है और मुस्लिम युगीन कथानकों से निर्मित नाटकों की भाषा उर्दू मिश्रित है । "श्री विक्रमादित्य " " समुद्रगुप्त पराक्रमांक, " " शिवाजी " " कौमुदी महोत्सव " आदि नाटकों के पात्र अपने वातावरण के अनुरूप विशुद्ध संस्कृत गर्भित हिन्दी का प्रयोग करते हैं और उन की भाषा काव्यात्मक भी है । " औरंगजेब की आखिरी रात " " तैमूर की हार " आदि नाटकों में उर्दू मिश्रित भाषा मुस्लिम वातावरण में स्वाभाविक लगती है । डा. वर्मा अपने एकांकियों के नामकरण के विषय में भी इस दृष्टिकोण से सजग हैं । उन के मुगलकालीन नाटकों के नामों को- करने पर विदित होता है कि कथानक के वातावरण के अनुरूप नामकरण किया गया है । " औरंगजेब की आखिरी रात " को चाहे तो " औरंगजेब की अंतिम निशा " भी कह सकते हैं और " लखनऊ की रंगीन शाम " को लखनऊ की रागरंजित सन्ध्या " भी कह सकते हैं । लेकिन इस तरह के नामकरण वातावरण के प्रतिकूल होने के कारण अस्वाभाविक लगते हैं । इसी तरह सामाजिक इतिवृत्तों पर लिखित एकांकियों में भी पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग मिलता है । पात्रों की मानसिक परिस्थिति के अनुसार घटनाओं की क्रिया और प्रतिक्रिया के रूप में जो शब्द अनायास ही निकल पड़ते हैं उन्हीं से पात्रों के संवादों की सृष्टि हुई है । जहां पात्र सुशिक्षित हैं वहां भाषा भी प्रौढ़ है । लेकिन बीच बीच में हास्य और व्यंग्य की उक्तियां भी मिलती हैं जिन से कथा वस्तु अति गंभीर होने से बचती है ।

पृष्ट ११८ में से शेष :-- (०) स्वगत कथन ह हिन्दी नाटकों की पैतृक सम्पत्ति रहने पर भी अब काम की चीज नहीं है । यह नितान्त अस्वाभाविक है कि कोई व्यक्ति अपने आप ही बोलता हुआ चला जाय । न उस के साथ आदमी है न वह स्वयं आदमियों के साथ है । किंतु वह जो मन में आता है बोलता चला जाता ऐसी स्थिति में तो हम उसे पागल कहेंगे या शराबी या अफीमची । डा. वर्मा -- रंगमंच साहित्य सुषमा पृ १४.

" नदी का रहस्य " में प्रो. हरि नारायण के वर्ड्सवर्थ [illegible] [illegible] [illegible] की कविता पढ़ते समय जूते में [illegible] पालिश करने के लिए मोची का प्रवेश मनोरंजक परिस्थिति खड़ा करता है। प्रोफेसर कहते हैं ---" वर्ड्सवर्थ और मोची। अच्छा संयोग।" इस में जहां हास्य की छींटे हैं वहां प्रोफेसर के एकान्त जीवन की करुणा की रेखाएं भी खींची गई है। " अठारह जुलाई की शाम " में अशोक एक विलासी युवक हैं। उस के मुंह से निसृत हर एक शब्द उस के चरित्र की स्पष्ट घोषणा करता है। उस की वाग्धारा रोमांटिक है और मनोरंजन की सृजन करती है। साथ ही साथ उस की वासनामयी प्रवृत्ति को व्यंजित करती है। उषा को बहकाते हुए अशोक कहता है -- खुद का बंगला जिस में बीस तो खानसामें हों। मखमली गद्दे जिन पर बैठो तो मालूम हो किसी की गोद में बैठी हो। अधखुली खिड़की से स्वी वेट मार्निंग सन् की सुनहली किरणें यदि सारे शरीर को चूम लें तो बश न लगे। कमरे में रखे हुए मलटी कलर्ड क्रोटन के इन्द्र धनुष शाम को ठंडी सड़क पर रॉबिन के जोड़ों का कोलाहल और उर्सीसिपय साथ साथ वाकिंग।" इस उदाहरण में अंग्रेजी शब्दों की भरमार हैं। पर यह भाषा रोमेंटिक विलासी युवक की है जो उस प्रसंग और पात्र की मन: प्रवृत्ति के अनुकूल है। जहां कहीं भी निम्न वर्ग के पात्रों का सृजन हुआ वहां पर ग्रामीण शैली का प्रयोग डा. वर्मा ने किया हैं।" " एक तोले अफीम की कीमत " का रामदीन, " प्रेम की आंखें " का बैजनाथ " पृथ्वी का स्वर्ग " के मंगल मिसरानि और बोभा ढोनेवाला, फ्लैट हैट, के शंभू और मनकू की भाषा हम उदाहरण के रूप में ले सकते हैं। इस की बोलियां भी आपस में बहुत मेल नहीं खातीं। अपनी अपनी स्थिति और [illegible] पेशों के अनुसार इन की भाषा भी भिन्न तरह की होती [illegible] हैं। " फ्लैट हैट " में शंभू अपने मालकिन को इस प्रकार समझाता है ---" अब सरकार ई मां कौन बात ? जब हम तरकारी -- उरकारी लिये के बरे बाजार जात तो आपन साफा मा नाहीं बांधत ? तौ अंगौछा रहा तौ उहि मां बांध लीन और तै अंगौछा [illegible] नहीं था तौ आपन साफा मां बांध लीन। अपना साहब साफा - वाफा बंधतै नाहीं। टोपी उन के रही। हम ओही मां आलू धरि दीन सजाय के। विनाश भैया सैसन करत हैं।"
इस बोली से एक ओर विनोद मिलता है और दूसरी ओर शंभु अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। बंगाली आदि अन्य भाषा बोलनेवालों से अशुद्ध हिन्दी बुलवाकर डा. वर्मा हास्य उत्पन्न करते हैं। "रूप की बीमारी," एकांकी काव्य, डा. दासगुप्ता की भाषा इस के लिए उदाहरण के रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

" आॅपरेशन से एक लांग निकाल के फेंक देता । शीरफ़ एक लांग से आदमी जिन्दा रहने शाकता । ओ बाबा । आॅपरेशन से हड्डी नीकाल के लोहा लगा देता । हम टालने शाकता लेकिन बीमारी बाढ़ने का बात होगा । आप को पारेशानी भी होगा और टाका भी खर्च होगा। "

डा. वर्मा की एकांकियों की भाषा स्वाभाविक और सजीव है, कहीं कहीं काव्योचित मधुरता मिलती है । इन के पात्र भावुकता में बहते हुए ऐसी बातें करते हैं जिन में गद्य काव्य का सा आनन्द मिलता है । " रेशमी टाई" एकांकी में यह वर्णन इसीतरह का है --- " और वह निर्झर ! बीस फीट से नीचे गिर रहा है शायद यह बतलाने के लिए कि सौन्दर्य का भी पतन होता है । जल जैसी कोमल वस्तु को भी संसार के संघर्ष का अनुभव करना पड़ता है । " इसी नाटक में अन्य स्थल पर वर्णन इस प्रकार है ---" एक एक फूल अपने अंग में एक एक काश्मीर को समेट कर बैठा है । न जाने कहां कहां से फूल निकल कर कहते हैं --- लो हमें देखो । " इस तरह के वार्तालाप में उन के कवि संस्कार बोलते दिखाई पड़ते हैं । इन की भाषा में सुरुचि है, साहित्यिक सौन्दर्य है और है कलात्मक व्यंजकता । सामाजिक एकांकियों के नामकरण के विषय में भी उन की सतर्कता दिखाई पड़ती । प्राय: एकांकी की मुख्य वस्तु को लेकर नामकरण किया जैसे पुरस्कार, फ़ेलट हैट, छोटी-सी बात, रेशमी टाई आदि उन उन कथानकों की मुख्य घटना की केन्द्र बिन्दु हैं ।

नाटक के मूल्य बढ़ाने में वातावरण का अधिक हाथ रहता है । ऐतिहासिक नाटक लिखने के पहले डा. वर्मा तत्कालीन सभी इतिहास की पुस्तकों का अध्ययन कर सांस्कृतिक पृष्टभूमि का ज्ञान प्राप्त करते हैं । अत: सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण ऐसा होता है जो उस कथानक विशेष के अनुसार काल, स्थान और परिस्थिति के अनुकूल होता है । डा. वर्मा ने पुष्ट भूमि संबंधी हर छोटी बात पर ध्यान दिया है । वस्त्र, वेशभूषा अलंकरण, तत्कालीन रीति मर्यादाएं आदि को एकत्रित करने से उस युग का वातावरण निर्मित होता है । उन्होंने " रजतरश्मि " की भूमिका में स्पष्ट किया है -----
" सभी नाटक ऐतिहासिक कथा वस्तु से संबंध रखते हैं । इस दिशा में मुझे इतिहास के अध्ययन के साथ साथ तत्कालीन सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की पूरी तैयारी करनी पड़ी । इस सांस्कृतिक पृष्ट भूमि में पात्रों के चरित्र को मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रित करने की दृष्टि रखी गई है । "

~~इन के ऐतिहासिक नाटक " शिवाजी " कौमुदी महोत्सव " " समुद्रगुप्त पराक्रमांक , " श्री विक्रमादित्य " आदि नाटकों का वातावरण~~

इन के ऐतिहासिक नाटक " शिवाजी " कौमुदी महोत्सव " " समुद्रगुप्त " " पराक्रमांक, " " श्री विक्रमादित्य " आदि नाटकों का वातावरण उन उन कथानकों के उपयुक्त पृष्टभूमि के रूप में चित्रित है । सामाजिक एकांकियों में भी वातावरण के सृजन पर लेखक को ध्यान देना ही पड़ता है । हां, ऐतिहासिक एकांकी के वातावरण के सृजन में जितना अध्ययन करना पड़ता है उतना सामाजिक एकांकी के लिए आवश्यक नहीं है । क्योंकि लेखक की सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति समाज की हर एक बात को ग्रहण करती है और आवश्यकतानुसार उन का उपयोग उपयुक्त स्थल पर करती है । वर्मा जी के एकांकियों में कथावस्तु के अनुकूल वातावरण का सृजन हुआ है । उदाहरण के लिए " परीक्षा एकांकी की परीक्षा कर सकते हैं । डा. राजेश्वर रूद्र संसार के महान वैज्ञानिक हैं जिनका आफिस कथा वस्तु का केन्द्र है । श्रीमती रत्नानाथ की परीक्षा वहीं पर की जाती है । वैज्ञानिक के आफिस का वातावरण इस कथावस्तु के लिए उपयुक्त है । इसी भांति अन्य एकांकियों में भी उन उन परिवारों अथवा व्यक्तियों की स्थिति के उपयुक्त वातावरण का विवरण दिया गया है ।

सफल और श्रेष्ट नाटक की कोटि में वे ही नाटक रखे जा सकते हैं जो अभिनेय हो । डा. वर्मा के एकांकी नाटकों का प्रमुख आकर्षण अभिनयशीलता है । उन्हें रंगमंच की आवश्यकताओं का पूर्ण ज्ञान है । स्वयं नाटकों में भाग लेने तथा निर्देश का कार्य संभालने के कारण उनका अनुभव निखर उठा है । उन्होंने रंगमंच की सूचनाएं इतने विस्तार से दीं कि निर्देशकों को ही उन से सहायता मिलती बल्कि पाठक भी उन सूचनाओं के बल पर नाटक के दृश्यों को मनोनेत्र ग्राह्य कर सकते हैं ।

डा. वर्मा पात्रों के चरित्र का परिचय देने में कुशल हैं । पात्र की प्रधान विशिष्टता को स्पष्ट कर अन्य विशेषताओं का उल्लेख संक्षेप में कर देते हैं । चरित्र को संक्षेप में स्पष्ट करने के लिए भाषा की व्यंजनाशक्ति अपेक्षित होती है । अत: उन के चरित्र के रेखा चित्र कवित्व या व्यंग्य के द्वारा अंकित किये जाते हैं । (०)

---

(०) डा. नगेन्द्र --- आधुनिक हिन्दी नाटक पृ. १३४. (रामकुमार वर्मा की लघु दर्शिनी शिल्प-प्रतिमा स्केच खींचने में बड़ी प्रवीण है । उन के पात्रों के चित्र केवल दो-दो तीन-तीन लकीरों से खींचे हुए है । -- परन्तु एकदम स्पष्ट है । वे पात्र की प्रमुख विशेषता को चुनकर पहले एक गहरी नीली रेखा खींच देते हैं, फिर दो एक हल्की - सी और, बस चित्र पूरा हो गया । इस प्रधान रेखा को खींचने में अधिकतर कवित्व और कभी कभी व्यंग्य की सहायता ली जाती है ।)

नीचे के उदाहरण इस के प्रमाण हैं ।

जगदीश, हरि भजन:-- ये दोनों सोमेश्वर चन्द्र की नौकर हैं, दोनों बड़े मेहनती हैं । लेकिन अपने मालिक को प्रसन्न नहीं कर पाते । बड़ी संजीदगी से काम करते हैं । राजेश्वरी -- वस्त्रों में सरलता, मुद्रा में गंभीरता -------- भौंहों के बीच में रोली की नन्हीं सी बिन्दी, ओठों की मिलन रेखा में जैसे मुस्कान डूब गई है । अशोक को देखकर वह कुछ विचलित हो जाती है । आकर उषा को चुपचाप नमस्ते करती है ।

डा. नगेन्द्र ने डा. वर्मा के एकांकी शिल्प के रूप पर विचार करते हुए लिखा है कि वर्माजी की कला में विकास की प्रमुखता है । उस में एक क्रमिक उतार-चढ़ाव के सहारे घटना अथवा चरित्र चरम परिणति तक पहुंचता है और अंत में गांठ सी खुल जाती है। नगेन्द्र का यह कथन पूर्णत: सत्य है । डा. वर्मा के एकांकियों के वस्तु विन्यास में विस्मय और कौतूहल की मात्रा अधिक रहती है । घटना को उस स्थिति तक विकसित कर अंत में अपने उद्देश्य की व्यंजना कर देते है । इस तरह के वस्तु विन्यास में प्रेषणीयता तभी संभव होती है जब कि कौतूहल और विस्मय को उत्पन्न करने के लिए स्वाभाविक साधनों का उपयोग किया जाता है । डा. वर्मा ने कहीं कहीं कृत्रिम साधनों का प्रयोग कर एकांकी की वस्तु को प्रेषणीय बनाने का प्रयत्न किया है । " नारी की वैज्ञानिक परीक्षा "। के साधन कृत्रिम हैं और " एक तोले अफीम की कीमत " के स्वाभाविक हैं । केवल चारित्रिक द्वन्द्व के आधार पर सृजित एकांकियों में भी उन की कला का विन्यास उपर्युक्त ढंग का ही है ।

आदर्श की स्थापना करने की प्रवृत्ति जब लेखक में उठती है तब वह उपदेश देने लगता है । उपदेश की मात्रा के बढ़ जाने से कलात्मिक विन्यास में शिथिलता आ जाती है । लेकिन एक बार जब उपदेश देने की प्रवृत्ति जागती है तो लेखक फिर उस लोभ को दूर नहीं कर सकता । इस का तात्पर्य यह नहीं कि लेखक अपनी रचनाओं में आदर्श की प्रतिष्ठा ही न करें । आदर्श की प्रतिष्ठा करते समय लेखक को यह ध्यान रखना चाहिए कि कलात्मिक विन्यास की प्रौढ़ता नष्ट न होने पावे । यह पहले ही कहा जा चुका है कि डा. वर्मा आदर्शवादी लेखक हैं । उन के एकांकी नाटकों की समाप्ति आदर्श की स्थापना के साथ होती है । उन के कुछ ऐसे एकांकी भी है जिन में कलात्मक विन्यास में शिथिलता दृष्टिगोचर होती है । उपदेश देने में एकांकी का रूप विस्तृत हो गया है । विस्तार एकांकी विधा के विरुद्ध है । " अंतिम आदर्श की स्थापना के लिए "प्रेम की आंखें "" एकांकी के प्रारंभ में मदन मोहन और रेखा के बीच १०-११ पृष्ठों का वादविवाद छेड़ा गया है । उस वादविवाद के प्रथम अंश के हटाये जाने पर एकांकी की प्रेषणीयता और भी अधिक होती है ।

सभ्य समझे जाने वाले नगर वासियों की अपेक्षा असभ्य कहलानेवाले ग्रामीण लोगों में मानवता सुरक्षित है। उन में सहज वरद मानवीय गुण प्रेम, सहानुभूति, करुणा, ममता आदि गुण दिखाई पड़ते हैं। ग्रामीण बैजनाथ के द्वारा इस सत्य की स्थापना के साथ रेखा में आदर्श परिवर्तन उपस्थित करना एकांकीकार का उद्देश्य है। ग्रामीण स्त्री की प्रेम भरी आंखों
सामने नागरिक स्त्री की सुरमे भरी आंखों
का क्या अस्तित्व है ? इसी की स्थापना करने के हेतु एकांकी के प्रारंभ का वादविवाद रचा गया है। लेकिन उस का विस्तार हद से बढ़ गया है जिस से उस की कला शिथिल सी जान पड़ती है। वागविवाद को संक्षिप्त करने पर भी प्रभाव में कोई अंतर नहीं पड़ता। अपितु उस के कलात्मक सौन्दर्य की वृद्धि होती है। इस तरह का विस्तार ऐसे एकांकियों में भी पाया जाता है जिन में एकांकीकार ने विनोद और मनोरंजन की सामग्री प्रस्तुत की है। " रूप की बीमारी " में कथोपकथनों का विस्तार आवश्यकता से अधिक बढ़ गया है। लेकिन इस तरह के एकांकी संख्या में कम हैं। अन्य एकांकियों में इस तरह के दोष लक्षित नहीं होते।

निष्कर्ष यह है कि डा. रामकुमार वर्मा का एकांकी साहित्य अपनी वस्तुगत तथा शिल्पगत विशिष्टताओं के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में अपना पृथक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उन की साधना क्रम रूप से विकास के पथ पर अग्रसर हुई है। सन् 1930 से लेकर आज तक उन के द्वारा जितने एकांकी रचे गये हैं उन सब के पीछे उन का एक ही दृष्टिकोण काम करता रहा है देश वासियों के सामने आदर्श को रखकर उन के जीवन की गतिविधि को सत्य की ओर ले चलना उनका लक्ष्य है। उनका संपूर्ण एकांकी साहित्य इसी लक्ष्य-सिद्ध के लिए ---सृजित हुआ है। शिल्प विन्यास की दृष्टि से उन की कला क्रमशः विकसित हुई है। निर्माणकालीन एकांकियों में एकांकी कार का उज्ज्वल भविष्य लक्षित हुआ है और वह बात विस्तार काल में सत्य प्रमाणित हुई है। भविष्य में, इन से और भी बड़ी आशाएं हैं।

---------oo--------